
चैत
मानखा

प्रकाशक
रूपायन संस्थान, बोरून्दा
वरास्ता: पीपाड शहर

प्रथम संस्करण आसोज, २०१४ वि.
द्वितीय संस्करण दीपावली २०२५ वि.

मूल्य : बीस रुपये 7

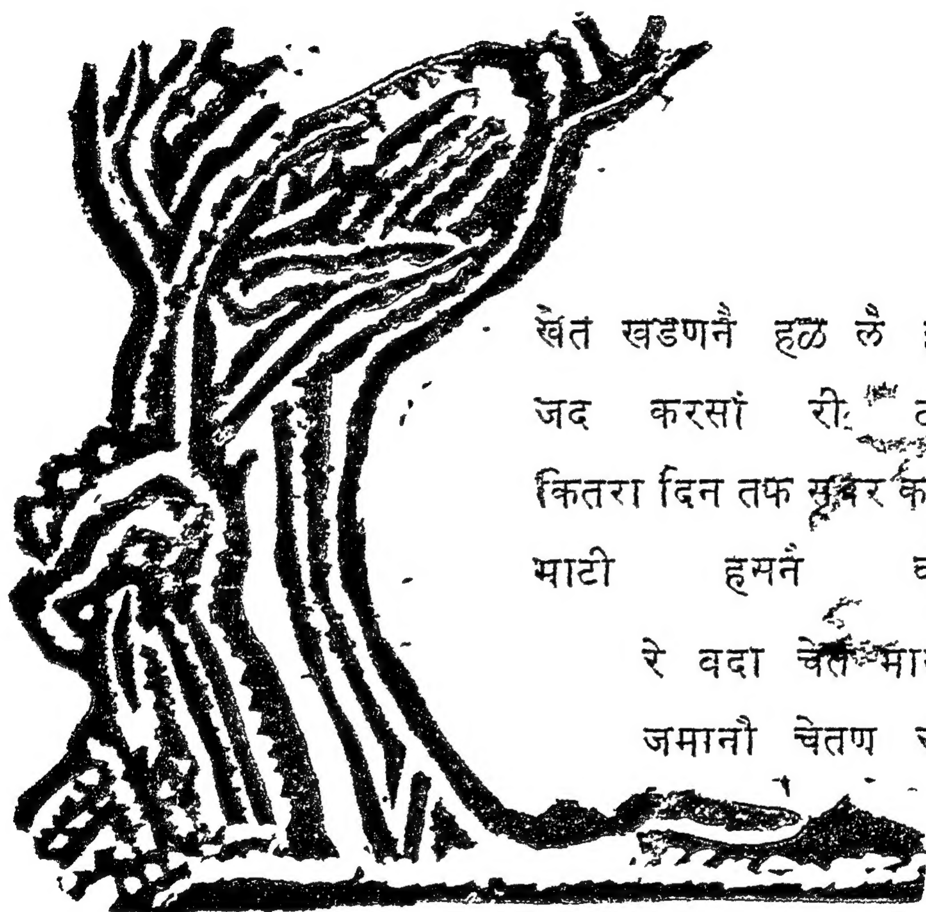
सम्पादक: कोमल कोठारी, विजयदान देथा

मुद्रक: रूपायन प्रेस, बोरून्दा

चेत मांनखा

रेवतदान

क्रम



खेत खडणनै हळ लै हाली,
जद करसां री टोळी;
कितरा दिन तक सबर करैला :
माटी हमनै बोली :
रे वदा चेत मानखा चेत,
जमानौ चेतण रौ आयौ !

चेत मांनखा — एक समीक्षा

राजस्थान के राजनैतिक, सामाजिक एव आर्थिक विकास की दृष्टि से यह आवश्यक है कि यहा की जन-चेतना के निर्माण के लिए राजस्थानी भापा का उपयोग किया जाय। विभिन्न रियासतो के विलीनीकरण के पूर्व राजस्थान की सगठित उन्नति के प्रयत्न नही किये जा सकते थे। और साथ ही रियासती राजस्थान मे राजनैतिक-चेतना को जागृत करने के लिए सघर्षमय ऐतिहासिक आन्दोलनो का भी नितान्त अभाव रहा। भारत की सभी प्रादेशिक भापाओ के विकास की पृष्ठ-भूमि मे, उस समय के राजनैतिक आन्दोलनो का बडा महत्वपूर्ण हाथ रहा है। राजस्थान उस ऐतिहासिक अनुभव के दौर से नही गुजरा और इसीलिए भारत की आजादी के समय तक राजस्थानी भाषा अपना महत्व दर्शाने मे उतनी सफल नही हुई जिससे कि उसे प्रादेशिक भाषाओ मे स्वीकार कर लिया जाता। आजाद भारत की प्रथम सविधान सभा मे राजस्थान प्रदेश का सपूर्ण एव प्रभावशाली प्रतिनिधित्व भी नही था। इसलिए प्रारभिक दिनो मे इस भापा के लिए कोई आवाज भी नही उठ सकी।

किन्तु भारत की आजादी एव रियासतो के विलीनीकरण के वाद. जव राजस्थान के जनतान्त्रिक विकास की समस्याए सामने आने लगी, हर एक साधारण राजस्थानी को जब प्रतिदिन के राजकाज मे हाथ वटाने की सुविधा दी गई और आर्थिक रूप से पिछडे प्रदेश को उन्नत वनाने के प्रयत्न प्रारम्भ हुए तो सब से पहली समस्या यही आई कि जन-सम्पर्क के लिए किन माध्यम से वातचीत की जाय? राजस्थान के जन-जीवन को जानने वाला प्रत्येक व्यक्ति यह भली भाति जानता है कि यदि उसको साधारण लोगो के सामने अपनी वात रखनी है तो उसे एक ऐसी भापा का प्रयोग करना पडता है जो हिन्दी नही है। इसी प्रकार हम जानकारी की सभी भापाओ के नाम ले सकते है किन्तु वह 'नाम' यहा की जनता के समझने-समझाने व वोलने-समझने की भापा नही है तो अपने आप ही राजस्थान के नव-निर्माण सवधी कार्यो एव जनतत्रीय शिक्षा के साथ-साथ राजस्थानी भापा की सामाजिक आवश्यकता को महसूस किया जाने लगा और राजस्थान के अनेक नवयुवक इस सामाजिक आवश्यकता को भली भाति समझ कर भापा को विकसित करने की दिशा मे वढने लगे। नवयुवको का यह प्रयत्न उनके उस सामाजिक कर्त्तव्य एव दायित्व की ओर इशारा करता है जिसके वल पर वे राजस्थान के वर्तमान एव भविष्य के सांस्कृतिक जीवन के निर्माण की कल्पना करते है।

जन-जीवन से अनुप्राणित और जन-जीवन के दैनन्दिन कार्य-व्यापारो को व्यक्त करने वाली राजस्थानी भापा सभी नये साहित्यकारो के लिए एक प्रेरणा है—एक चुनौती है। प्रेरणा इसलिए कि हमारे प्रदेश के अधिक से अधिक लोग इस भापा को समझ सकते है, इस भाषा मे व्यक्त भावो को हृदयंगम कर सकते हैं और चुनौती इसलिए है कि इस भापा ने अब तक नये युग की नयी वातो को व्यक्त करने की क्षमता नही प्राप्त की है। भापा मे क्षमता लाना, काव्य-सम्मत सांकेतिकता का निभाव करना, यही चुनौती का पक्ष है। नयी वातो को कहने की क्षमता इस भाषा मे

क्यो नही है यह स्वाभाविक प्रश्न है, किन्तु इस प्रश्न का सहज उत्तर है कि अभी हमारा जन-मानस उस चेतन क्रिया के दौरसे अनुभव ग्रहण करके नही निकला है जो भाषा को शक्ति एव क्षमता दे सकती है। पर भापा और साहित्य प्रयोजनहीन तो है नही इसलिए आज जो भी कवि आधुनिक राजस्थान के जन-जीवन से अविच्छिन्न है, जिसकी मजबूत जडे राजस्थान के रहने वाले लोगों के 'मानस' मे है और जो भी कवि अपने समाज और अपने निकट के जीवन को काव्यमय सकेतों मे अभिव्यक्त करना चाहता है उसे राजस्थानी भापा को स्वीकार करना ही पडेगा। राजस्थान मे रहने वाले प्रत्येक सजग साहित्यिक का यह दायित्व है कि वह राजस्थानी भापा के माध्यम से जन-जीवन का सक्रिय चित्रण करे और अपनी काव्यात्मक कृति द्वारा जन-मानस का निर्माण करे। जो कवि या साहित्यकार राजस्थान के लोगो के जीवन से सपर्क रख कर उन्ही की भापा एव भावगत सपदा को परख कर सृजन के क्षेत्र में आयेगा वही युग का प्रतिनिधित्व कर पायेगा। शेष केवल अमरबेल की तरह समाज पर छाये रहेगे। ममय की हवा उन्हे नष्ट कर देगी।

राजस्थानी भापा की इस सामाजिक आवश्यकता का एक दूसरा पहलू भी है, राजस्थानी भापा हमारे लिए एक ऐसी तुला है जिस पर तोल कर हम यह देख सकते है कि कौन सृजनशील कलाकार अपने मामाजिक कर्त्तव्य के दायित्व को निभा रहा है और कौन सृजन के नाम पर केवल अपना ही मनोविनोद कर रहा है ? कौन राजस्थान के अनपढे लोगो को 'कान' के माध्यम से 'भापा' सुना कर उन्हे जागृत और सजग बनाने की कोशिश कर रहा है और कौन केवल निर्जीव शब्दो की छन्द-रचना करके साहित्य के क्षेत्र मे दखल जमाये बैठा है ? इसी तुला पर तोल कर हम यह भी निर्णय ले सकते है कि कौनसा साहित्यकार अपने समाज एव समकालीन जीवन के निकट है और उसकी प्रेरणा का स्रोत जीवन्त समाज से कितनी शक्ति ग्रहण करता है ? यदि यह

प्रेरणा-स्रोत निर्बल एव अशक्त है तो साहित्यकार की मौलिकता और उसकी उपयोगिता [कलात्मक या अन्य] अवश्य ही सदिग्ध है।

श्री रेवतदान की प्रस्तुत कविताए राजस्थानी भाषा मे है। इन कविताओ के विषय राजस्थानी जन-जीवन के नाना-रूपात्मक अनुभवों से अलकृत है। राजस्थानी भाषा एव यहा के जन-जीवन के चित्रण का प्रयत्न ही कवि की उस मनोराग की ओर इशारा करता है जहा उसने भाषा की सामाजिक आवश्यकता एव अपने सामाजिक कर्त्तव्य के बीच काव्यात्मक समन्वय प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है।

समन्वय का यह प्रयत्न सहज नही है क्योकि जन-साधारण मे प्रचलित भाषा के द्वारा ही जन-साधारण के औसत भावो को अभिव्यक्त करने मे कविता की सांकेतिकता एव लाक्षणिकता को बहुत कुछ खोना पडता है। क्योकि घटना के एकदम साथ ही साथ उसका चित्रण हमारे मन पर गहरा प्रभाव तो छोडता है किन्तु जब 'घटना' की वास्तविकता हमसे कुछ दूर हो जाती है तो कविता मे स्वयमेव दुर्बलता दिखाई देने लगती है। क्योंकि ' घटना ' या अपने ' समय ' के दौर की प्रतिक्रिया तब तक समाप्त हो जाती है। 'घटना' के दौरान मे बनी हुई कविता की अवस्था भी बहुत कम होती है। इसलिए सामाजिक चेतना को उद्‌बुद्ध करने वाले कवियो के सामने एक बहुत बडी समस्या यह रहती है कि वह अपने 'काल' की घटना को भी ऐसे 'अमूर्त' या 'साधारणीकृत-मनोभाव' मे देख सके जिससे कि उनकी कविता समय के दौर मे जीवित रह सके एव मनुष्य के चित्त को रंजित कर सके। यह कठिनाई उन कवियो को कभी नही उठानी पडती है जो अपने समय, अपने अनुभव और अपने मौलिक चिन्तन को तिलाजलि देकर कविता का बेसुरा राग अलापते रहते है। लेकिन इधर अपने समकालीन जीवन की औसत अनुभूतियो से प्रेरणा ग्रहण करने वाले कवि वास्तव में सच्चे कवि हैं और उन्ही की अनुभूतिया मनुष्य के अतीत और भविष्य के जीवन को एक कडी मे पिरोया

करती है।

श्री रेवतदान की कविता मे समय को व्यक्त करने की ताकत है। कवि मे आज की औसत अनुभूतियो से प्रेरणा ग्रहण करने की क्षमता है। इन कविताओ को पढ कर आज से सौ साल बाद आने वाला हमारा वशज हमारे समाज की झलक देख सकेगा। इस समय हम एक ऐसे सामाजिक दौर मे से गुजर रहे है जब हमारा सामन्ती आर्थिक ढाचा चरमरा कर टूट रहा है। लेकिन इस टूटते हुए ककाल को पिछली शताब्दियो से विदेशी सत्ता ने ज्यो का त्यो कायम रखने का कृत्रिम एव अथक प्रयत्न किया। उन्होने हमारे समाज के स्वाभाविक विकास को अपनी आर्थिक साम्राज्य-लिप्सा की वजह से रुद्ध बनाया और हमारे दुर्भाग्य से उन्हे अपनी कुटिलता मे पूर्ण सफलता मिली। दो शताब्दियो तक उन्होने हमारी सामन्ती ककाल-व्यवस्था को ज्यो का त्यो बना रहने दिया। जब समाज का वही ढाचा बना रहा तो राजस्थान की सभी कलाए उसी सामन्ती नैतिकता की पोषक बनी रही, उन्ही परिस्थितियो की सीमाओ के अधकार मे घुटती रही। साथ ही यह भी बहुत हद तक सही है कि उस सामन्ती नैतिकता मे सहज मानवीय गुण थे, किन्तु उन सहज गुणो का सक्रिय और सजग उपयोग बदली हुई हालत मे नही किया जा सका। वीरता की दुहाई देने के बाद भी अपने राष्ट्र को आजाद बनाने के लिए बलिदान देने वालो या सगठित नेतृत्व प्रदान करने वालो की निरन्तर एव नितान्त कमी बनी रही। लेकिन समाज की यह रुद्ध स्थिति चिर काल तक चल नही सकती थी। इसी दौरान मे दुनिया भर के आर्थिक सम्बन्ध बदल रहे थे, ब्रिटिश भारत एव रजवाडो के सम्बन्धो मे कुछ परिवर्तन हुए, ब्रिटिश भारत ने औद्योगिक तरक्की हासिल की, वहा जमीन की व्यवस्था के बदलने के साथ किसान के हको मे बदलाव आया, उन्ही शताब्दियो मे किसानो ने अपनी आखो के सामने ग्रामीण-व्यवस्था को टूटते देखा और उनके स्थान पर क्रूर जमीदारी शोषण की

व्यवस्था को पनपते हुए भी अनुभव किया। लेकिन हमारे देश की स्थिति मे कोई उत्तेजना नही आई और जो उत्तेजना प्रारम्भ हुई तो उसे सकारात्मक रूप लेते-लेते हम सन् ४७ के १५ अगस्त तक आ पहुचे। भारत की आजादी के वाद रियासतो को भी आजादी मिली। छोटे-छोटे भौगोलिक टुकडो को तोड़ कर राजस्थान की रियासतो का एक सगठन बना। छोटी-छोटी सत्ताए शेप नही रही। इतिहास मे पहली बार राजस्थान को सास्कृतिक, भौगोलिक एव प्रशासनिक इकाई वनने का अवसर मिला।

इस परिवर्तन ने राजस्थान को जड़ से हिला दिया। सारे भारत के कानूनो के साथ होड लगाने के लिए ज्यो-ज्यो राजस्थान मे नई-नई सामाजिक, राजनैतिक एव सरकारी व्यवस्थाए वनती गई वह प्राचीन और दुर्वल सामती ककाल भड़ने लगा। उम ककाल के साथ सहानुभूति का मन लेकर एक भी दयावान आदमी के आखो मे आसू नही आये।

इधर यह जो इतिहास वदला और इतिहास को वदलने वाले लोगो का दल वदला तो उधर वदलती हुई परिस्थितियो मे जीवन की मान्यताए वदलने लगी। अव भूमि का स्वामी राजा नही रहा, सामन्त नही रहा। भूमि को जीतने के हथियार तलवार और तोप नही रहे। एक-एक इच भूमि को अपने कव्जे मे रखने के लिए लाखो-लाखो सिरो को कटने की जरूरत नही रही। वीरता, साहस, शौर्य्य, प्रेम, दया, ममता, हर्प आदि सभी भाव-स्थितियो के आलवन वदल गये। पुरानी कविताओं की अतिरजित कल्पनाओ मे सिर हिला-हिला कर आनद लेने वाले लोगो की सख्या सीमित होती चली गई। और इस ककाल के ध्वस पर नवीन भावो, नवीन कल्पनाओं, नवीन सूझों और नये विचारो की नयी वेल फलने-फूलने लगी।

श्री रेवतदान की कविताओ मे किसान अपनी धरती के स्वामी है। वे ही एक-एक मोती का दाना वोकर लाखो मण मोती निपजाने वाले

जादूगर है।" लेकिन उन्हे यह अधिकार सहज ही मे नही मिल गया। इन किसानो को युगो से भाग्य के भरोसे बाध कर रखा गया है। कवि उन्हे अपने ही तरीके से जमाने का प्रयत्न करता है। उसका कहना है कि—

बांगौ व्है ज्यूं आभौ देखे, विलखै आंख्यां फाडै;
बोळौ बगनौ व्हैगौ कीकर, धरती हेलौ पाडै;
तन माटी रौ सोच न कीजै, बैठी घडै विधाता;

"हे किसान, अपने अधिकार को जान! तुझे अपने अधिकार की जो प्रेरणा हो रही है उसके पीछे अनजान सामाजिक तथ्यो का अस्तित्व है। इसलिए चितित होकर यो न देख! और उस बात की भी चिन्ता मत कर कि अधिकार को प्राप्त करने के लिए तुझे सदा के लिए गहरी नींद मे सो जाना पडेगा। इस मिट्टी के तन की चिन्ता मत कर! विधाता, मिट्टी के अनेक मनुष्य तैयार कर देता है!"

कवि को और आज के समाज को यह निश्चित रूप से मालूम है कि जमीन पर किसान के अधिकार और उसके शोषण का अन्त बातो ही बातो मे नही हो गया। सभी देशो के किसानो की तरह राजस्थान के किसानो ने भी अपने जीवन के सभी सुख-स्वप्नो को भुला कर जीवन के अधिकार को पाया है। किसानो के सगठित मोर्चे ने 'माटी' के लिए 'कफन' बाध कर चलने का निर्णय किया था। किसान के दिन-प्रतिदिन के अनुभवो के माध्यम से कवि ने उनमे सामाजिक चेतना के तत्वो को उदबुद्ध करने का प्रयत्न किया है। राजस्थान के शोषित किसानो की कवि के शब्दो मे यह कहानी है—

इण माटी मे सौ-सौ पीढी, मरगी भूखी प्यासी,
भाग भरोसै रह्यौ बावळा, प्रीत करी आकासी,
कदै तौ पडग्यौ काळ अभागौ, गिण-गिण काढचौ दोरौ;

कदै तौ ठाकर लाटौ लाट्यौ, कदै लाटग्यौ वोरौ;
कदै तौ वैरी दावौ पड़्यौ, कदै आयगी रोळी;

आकाश की ओर टकटकी वाध कर जो किसान अपने जीवन की आशा को पूरी करना चाहता है उसके दु:ख का कोई पार हो सकता है ? सभवतया नही। और प्रकृति के अतिरिक्त क्या सामाजिक स्थिति उसके लिए सहायक है ? नहीं, वह भी उसे 'लाटे' के द्वारा लूटने को तत्पर है। उसका वोहरा व्याज के वोझ से उसे हमेशा के लिए गड्ढे मे गाड देना चाहता है।

यह हमारी सामन्ती-व्यवस्था मे किसानो की स्थिति का सहानुभूति-जन्य चित्रण है। लेकिन कवि केवल वस्तुस्थिति के चित्रण से ही सतुष्ट नही है, वह समाज के उन कर्त्तव्यो की ओर भी निर्देश करता है जिनमे दु खो को हटाने की स्फूर्ति है। इन्कलाव की धुआ-धोर आधी के आचल मे उसे जीवन की नवीन आशा की क्षीण ज्योति जागती हुई दिखाई देती है। कवि मनुष्य जीवन की उस प्रवृत्ति को भली भाति आत्मसात् कर चुका है जिसके वल पर मनुष्य कभी परतत्रता की घुटन मे जीवित नही रह सकता। परतत्रता को तो वह स्वतत्रता की उन्मुक्तता मे वदल कर ही रहेगा। समाज की सक्रिय चेतना को सभी दुख-दर्दो के बीच मे पहिचानना कविताओ की सामाजिक उपादेयता हे।

किसान और जनसाधारण का चित्रण राजस्थानी प्रकृति एव उसके साथ उनका आत्मानुराग, उनके दैनन्दिन कार्य-व्यापार एव उनकी पृष्ठ-भूमि मे उनकी सहज व गहरी अनुभूति, और इन्ही साधारण लोगो की, अपने समाज की सहज नैतिकता के आधार पर बने हुए, सौन्दर्यानुभूति के मार्मिक तथ्य — ये ही कुछ विपय है जिन्होने श्री रेवतदान की कल्पना को प्रेरणा दी है।

विषयो की गहराई या उनकी सैद्धान्तिक समझ हमे अनेक व्यक्तियो में मिल जाती है किन्तु उन साधारण सिद्धान्तो को काव्यात्मक गुणो मे ढाल

कर प्रस्तुत करना कवि का अपना धर्म है। यदि सामाजिक स्थिति का यथातथ्य या जडवत् चित्रण छन्दमय भाषा मे कर दिया जाय तो उसे हम कविता नही कह सकते। कविता के लिए तो सामाजिक यथार्थ को वैयक्तिक अनुभूति के माध्यम से ही अभिव्यक्त होना पड़ेगा।

कविता के इस रूप को ग्रहण करना सहज नही है। क्योकि नये सामाजिक तथ्यो को शक्ति के साथ व्यक्त करने के लिए एक ओर तो यह समस्या है कि कवि को ऐसी भाषा का सहारा लेना पडता है जिसको अधिक से अधिक लोग समझ सके एव दूसरी ओर इन प्रचलित भाषा मे काव्यात्मक सकेतो का निभाव करना बहुत ही कठिन होता है। साकेतिकता को निभाने के लिए कवि के पास अपने प्रदेश की काव्यात्मक परपरा हुआ करती है, किन्तु प्रचलित भाषा और परपराबद्ध काव्यात्मक शैली एक-दूसरे से बहुत दूर होते है। यदि कवि राजस्थानी भाषा की परपरा शैली मे कविता बनाने का प्रयत्न करता है तो जनसाधारण के मानस एव उसकी समझ के परे हो सकता है और यदि उस परपरा को ग्रहण नही करने का प्रयत्न करेगा तो अपने प्रदेश के श्रेष्ठ काव्यात्मक प्रयोगो एव अभिव्यक्तियो के कोष से शून्य रहना पड़ेगा।

इस स्थल पर श्री रेवतदान की कविता एक नये मोड या नये समन्वय की ओर मुड चली है। हमारी सास्कृतिक परपरा मे जहा छन्दोबद्ध साहित्य या सौन्दर्य शास्त्र के अनुकूल लक्षण-साहित्य की उद्भावना हुई है वहा इस साहित्य के साथ ही साथ जनता का अपना ही लोक-साहित्य जन-मानस को अनुरजित करता रहा है। लोकसाहित्य का प्रथम गुण है औसत भावो की सशक्त अभिव्यजना। यह साहित्य छदो में नही बाधा गया। इस पर बडे ग्रथो की रचना भी नही हुई किन्तु फिर भी कल्पना और यथार्थ के बीच मे अद्भुत कलात्मक समन्वय लिये यह साहित्य जनता के कठो ही कठो मे विकसित होता चला गया। लोक-

साहित्य भी हमारी ही सास्कृतिक निधि का एक अमूल्य रत्न है। इस साहित्य मे लोक-रुचि , लोक-मानस, लोक अनुभूतियो एव लोकसम्मत साधारण भावो को निरतर प्रश्रय मिलता रहा। यह साहित्य अपने गुणों को साहित्यिक या कलात्मक मापदडो मे स्वीकार कराने के लिए युगो-युगो से मौन साधे रहा। इस साहित्य को प्रतीक्षा थी कि एक दिन ऐसा समाज आयेगा जो हर आदमी को समान अधिकार देगा , सबको विकसित होने का अधिकार देगा , व्यक्ति की स्वतत्रता का पोषक होगा , आदमी और आदमी के बीच की कृत्रिम बड़ाई-छोटाई को मिटा देगा और उस जनतत्र के युग की प्रतीक्षा का अत उस दिन हुआ जब भारत ने अपने स्वतत्र विधान का निर्माण किया। वयस्क मताधिकार की स्वीकृति के साथ ही व्यक्ति का महत्व वैधानिक रूप से स्वीकार कर लिया गया। लोकसाहित्य और लोकतत्र का यहा बहुत गहरा सम्बन्ध है। लोकतत्र की स्थापना या लोकतत्र की भावना की स्वीकृति के बिना लोकसाहित्य की उन्नति या उसके तत्वो को ग्रहण करने का प्रश्न ही नही उठ सकता था।

इस प्रकार हम देखते है कि लोकतत्र की सामाजिक मान्यता के साथ लोकसाहित्य की सशक्त भाव-धारा ने अपना गर्वीला सिर उठाया। उसने भी अपनी परपरा की स्वतत्र मान्यता स्थापित करवाई। श्री रेवतदान की कविता के रूप के विवेचन के समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि उनकी कविता मे जो ‘सामाजिक’ है वह समाज से टूट कर या परपरा से विच्छिन्न होकर ‘ सामाजिक ’ नही है , अपितु समाज के रासायनिक विकास के दौर मे ही ‘ सामाजिक ’ है। श्री रेवतदान के छद , उनके अलकार , उनके बात कहने की पद्धति , सभी बातो पर राजस्थानी लोकसाहित्य और विशेष कर लोकगीतो के तत्वो का प्रभाव है। इसका अर्थ यह हुआ कि रेवतदान ने जिस परपरा को ग्रहण किया वह परपरा केवल कुछ ही पढे-लिखे या शास्त्रज्ञ लोगो की काव्य-रसि-

कता या काव्य-ज्ञान तक ही सीमित नही थी बल्कि उसका ओर-छोर तो राजस्थान के सभी निवासियो के हृदयो की 'असीमता' को आच्छादित करने की क्षमता रखती है।

इस सकलन मे प्रेम-सबधी एक गीत है—आलीजौ भवर। लोक गीतो की सहज परम्परा से अनुप्राणित यह गीत हमारे मन मे अनेक अमूर्त भावाभिव्यजनाओ को जागृत कर देता है। इसी प्रकार 'विरखा बीनणी' एव 'बायरियौ' गीत भी लोक-जीवन की सहजानुभूति को आर्कापित कर लेते है।

इन लोकगीतो की अद्भुत प्रभाव-शक्ति को ही पहिचान कर कवि ने नवीन सामाजिक तथ्यो को भी इसी रूप मे ढालने का प्रयत्न किया है। कवि ने जनता मे प्रचलित प्रभावशाली रूप को ग्रहण करके अपनी जागृत चेतना के अनुसार नये विषयो को उन्ही मे ढालने का प्रयत्न किया है। 'रूप' की निकटता और पीढियो से 'रूप' का सबध होने के कारण उसमे निश्चय ही 'आत्मीयता' का भाव आ जाता है।

कविताओ के इस रूपगत विवेचन के बाद हमे उन शब्द की ओर देखना चाहिए जिन्होने 'रूप-निर्माण' और 'नये भावो' को व्यक्त करने मे नये अर्थो को ग्रहण किया है। शब्द हमारे समाज की एक अत्यत महत्वपूर्ण देन है। शब्द किसी वस्तु या भाव-स्थिति का बोध कराता है। समाज मे प्रचलित शब्दो के अर्थ बहुत सीमित और बिल्कुल निर्धारित होते है। यदि यह 'निर्धारण' नही किया जाय तो हम एक-दूसरे से बातचीत भी नही कर सकते, एक दूसरे को कभी समझ भी नही पायेगे। इसलिए प्रत्येक शब्द को एक निश्चित सर्वमान्य अर्थ देना ही पडता है। लेकिन कवि या साहित्यकार शब्दो मे इस निश्चित अर्थ के बावजूद भी बहुत कुछ कहना चाहते है। वे इन शब्दो का प्रयोग करते है किन्तु उनके 'शब्द' केवल वस्तु या भाव-स्थिति के द्योतक मात्र है, केवल सकेत मात्र करते है। वे निश्चित नही है। जो कवि 'शब्दो' को जितना ही श्रेष्ठ सकेत

बना सकता है, अधिक से अधिक अर्थ की अभिव्यंजना उसे दे सकता है वह उतना ही श्रेष्ठ कवि है। शब्दो की इस साकेतिकता के आधार पर ही अर्थ-गौरव एव अर्थ-सौन्दर्य का दिव्य वैभव पाठको को ग्रहण करने के लिए मिलता है। यह कहना तो ठीक नही होगा कि हमारे इस नवयुवक कवि ने कविता की इस श्रेष्ठता को पूर्ण रूप मे अपने काव्य में ग्रहण कर लिया है, किन्तु जब कवि की प्रवृत्तिगत विशिष्टता को देखने का प्रयत्न करते है तो पता चलता है कि इस कवि ने परपरा से चले आने वाले शब्दो का प्रयोग तो किया है लेकिन उनका अर्थ-सकेत तो कुछ दूसरा ही है। यहा इस विषय मे इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि यदि कवि अपनी इस विशिष्टता को विकसित बनाने का प्रयत्न करेगा तो निश्चय ही 'शब्दो' के सामाजिक-सकेतो को अद्भुत शक्ति एव अभिव्यजना मिल सकेगी।

इस पुस्तक के सपादन के विषय मे एक बात कहनी है। इस सकलन की कविताओ का गद्य मे भावानुवाद दिया गया है। यह भावानुवाद कही-कही कविता से भी बडा हो गया है। राजस्थानी साहित्य सभा के पहिले तीन प्रकाशनों मे भी हमने राजस्थानी कविताओ के हिन्दी गद्य में भावानुवाद दिये है। प्रश्न यह उठता है कि क्या हिन्दी भावानुवाद देना आवश्यक है? इसका एक सीधा उत्तर तो यह है कि राजस्थानी भाषा को अपने अस्तित्व के लिए हिन्दी भाषा से धर्मयुद्ध करना पडेगा। हिन्दी भाषा के बढते हुए दौर को, हमारी भाषा के विकास को खुली आंखो देखना चाहिए और देखना पडेगा। अत हिन्दी पाठकों को राजस्थानी भाषा के गौरव और उसकी क्षमता को बताने के लिए हिन्दी मे अर्थ दिये गये है। साथ ही हिन्दी के अर्थो के कारण इन पुस्तको की माग हिन्दी क्षेत्र में भी हो सकती है। और तीसरी बात यह है कि हम हिन्दी साहित्य को समृद्ध बनाना भी अपना एक पवित्र कर्त्तव्य मानते है।[और हम आशा करते है कि हिन्दी भाषा-भाषी लोग भी राजस्थानी भाषा को

विकसित बनाना अपना 'पवित्र कर्त्तव्य' समझेंगे।]

यह बात तो हुई केवल भावानुवाद की भाषा-सम्बन्धी। दूसरी बात है—क्या कविता का गद्यात्मक अनुवाद किया जा सकता है और यदि किया जाय तो उसकी सीमा कितनी हो ? हम तीनो प्रकाशनो के दौर मे यह बात सोचते रहे है और इस निर्णय पर पहुचे है कि गद्यात्मक अनुवाद केवल कविता का 'ट्रासलिटरेशन' या यथातथ्य उल्था मात्र न होकर एक ऐसी शैली मे किया जाय जो अपने गद्यात्मक रूप मे भी सफल हो। अर्थात् जो 'बात' कविता मे कही गई है उस बात को गद्य के रूप मे उसी शक्ति के साथ किस प्रकार कहा जाय, यही भावानुवाद का श्रेष्ठ मापदड होना चाहिए। गद्यमय अनुवाद और कविता का सबध विषयगत तो बिल्कुल एक ही रहे लेकिन रूप की विभिन्नता के साथ गद्य को अपने ही तरीके से 'वही बात' कहने का प्रयत्न करना चाहिए, तभी कविता के अर्थ-गौरव की ओर गद्यात्मक सकेत कर पायेगा।

इसी दृष्टिकोण के कारण गद्यानुवाद बडे हो गये है।

अन्त मे एक बात कहनी है। राजस्थान इस समय सक्राति काल मे से गुजर रहा है। यो तो सारा भारत ही सक्राति काल मे है किन्तु हमारे अस्तित्व मे कुछ अधिक अनिश्चयात्मक तत्व है। हमारी मातृ-भाषा को प्रादेशिक भाषाओ मे स्वीकार नही किया गया है। इस अधिकार से इन्कार करने का मतलब है कि राजस्थान मे श्री रेवतदान जैसे कवि की प्रतिभा को रोक देना, यहा के सास्कृतिक जीवन एव लोक-जीवन की आत्मिक एव आध्यात्मिक तरक्की को अवरुद्ध बना देना। यही कार्य तो ब्रिटिश काल मे होता रहा है। यदि वही ब्रिटिश परपरा आज भी चलती रही तो हमारे जीवन की श्रेष्ठ अभिव्यक्तियो को विनाश के गहन गर्त मे खो जाना पडेगा। केवल रेवतदान ही एक कवि हो और उन्ही पर यह खतरा आया हो सो बात भी नही है। सैकडो ही साहित्यकार और कवि अपनी मातृ-भाषा मे

अपने प्रदेश की औसत अनुभूतियों को व्यक्त कर रहे है और ज्यो-ज्यो सामाजिक चेतना और सामाजिक साधन वढते जायेगे त्यो ही त्यो उनकी सख्या भी वढती जायगी। इस वीज को रोकने का प्रयत्न करने वाला निश्चय ही जनतत्र की श्रेष्ठ परपरा का सबसे घातक शत्रु है! इसलिए सक्राति काल मे हमे अपने राजस्थान की सास्कृतिक निधि के स्वतत्र विकास के प्रयत्नो मे उन लोगो से कही अधिक सतर्क रहने की जरूरत है जो जाने-अनजाने हमारे विकास को रुद्ध करने की कोशिश कर रहे है या करेंगे।

इसी वात का एक और पहलू है। क्या हम आज ईमानदारी से राजस्थान के जन-जीवन को जनतात्रिक स्वतत्रता का उपयोग करने देने के लिए तत्पर है? क्या हम राजस्थान के हर किसान एव हर किसान नागरिक से अपनी पचवर्षीय योजनाओ मे सहयोग चाहते है? क्या हम चाहते है कि यहा के लोग पचायतो मे, कृषि-उत्पादन को वढाने मे, औद्योगिक तरक्की करने मे, शिक्षित होने मे आगे से आगे वढ कर आये? सच्चाई, ईमानदारी और लगन के साथ यदि ये कार्य करना चहाते है तो क्या हम राजस्थानी के विना काम चला सकते है? जिस प्रदेश मे नव्वे फी सदी लोग अनपढ हो, निरक्षर हो, जिन्हे केवल, कान से सुनाकर या आख से दिखा कर नवीन जीवन की आवश्यकताओ समझाना है, क्या उन्हे जागृत करने के लिए राजस्थानी भाषा को छोड़ देना चाहिए? वुद्धिमान और अनुभवी व्यवित तो एक ही वात कहेगा कि इस समय राजस्थानी भाषा को अस्वीकार करने का मतलव है राजस्थान के प्रत्येक निवासी को अपने विकास के लिए वढने से रोकने का प्रयत्न करना। उसे अज्ञान के अधकार मे रखने का कुत्सित प्रयत्न!

राजस्थानी भाषा का अस्तित्व हमारे जन-जीवन की श्रेष्ठ सास्कृतिक परम्परा के अस्तित्व का प्रश्न है। रेवतदान हमारी सास्कृ-

तिक निधि को ऐश्वर्यशाली बनाने वाले नवयुवक कवि हैं। उन्होंने राजस्थानी भाषा का उपयोग करके अपने वैयक्तिक कर्त्तव्य को निभाया है। हम सबका कर्त्तव्य भी शायद उसी दिशा मे है।

— कोमल कोठारी

[प्रथम संस्करण की भूमिका—आश्विन २०१४ वि.स.]



चेत मांनखा

खेत खडणनैं हळ लै हाली ,
जद करसा री टोळी ;
कितरा दिन तक सवर करैला ,
माटी हसनैं वोली :
रे बदा चेत मानखा चेत, जमानौ चेतण रौ आयौ !

इण माटी मे सौ-सौ पीढी , मरगी भूखी प्यासी ,
भाग भरोसै रह्यो वात्रळा , प्रीत करी आकासी ,
कदै तौ पडग्यौ काळ अभागौ, गिणगिण काढचौ दोरौ ;
कदै तौ ठाकर लाटौ लाटचो, कदै लाटग्यौ वोरौ ;
कदै तौ वैरी दावौ पडग्यौ , कदै आयगी रोळी ;
कितरा दिन तक सवर करैला , माटी हसनैं वोली ;
रे बदा चेत मानखा चेत ,
जमांनौ चेतण रौ आयौ !

माग्यां खेत मिळे नी करमा, मोल चुकाणौ पडसी ;
मोत्यां मूघी इण धरती रौ, कौल निभाणौ पडसी ;

साम्ही छाती जे कोई आयौ, जोर जताणौ पड्सी,
खेत खड़ता हळ जे रोक्यौ, हाथ कटाणा पड्सी,
लोई विना रंग नी आवै, धरती पड़गी धोळी,
कितरा दिन तक सबर करैला, माटी हंसनै बोली

रे बदा चेत मानखा चेत,
जमानौ चेतण रौ आयौ!

◇◇ किसानो की उन्मुक्त टोलिया जब अपने अपने खेतो को जोतने के लिए कधो पर हल और हाथो मे बैलो की रासे थाम कर मुक्त गति से आगे बढी तो पावो के नीचे दबी मिट्टी ने उनके उत्साह के प्रति उपहास की हसी हसते हुए कहा—कब तक ? आखिर और कब तक ? कितने दिनो तक इस तरह सहन करना रहेगा ? खुदा के बन्दे, अब तो चेत ! सारे जमाने मे चेतना का उत्फुल्ल प्रकाश लहलहा रहा है। और तेरे इस आत्मघाती सब्र का तो जैसे कोई अन्त ही नही है। गाफिल इन्सान, चेत ! निर्विलम्ब चेत ! यह चेतना और जागृति का युग है।

◇◇ क्या आँखो मे अगुली डाल कर ही मुझे दिखाना होगा कि जिस माटी के मोह ने तुझे इस तरह मतवाला बन रखा है, उसी माटी के कण - कण मे तेरे पुरखो की मेहनत दबी पडी है, मेहनत से पैदा किये हुए धान मे उनकी भूख दबी पडी है, अभिलाषाओ की अतृप्त प्यास दबी पडी है। भोले इसान ! पीढियो मे तूने इसी तरह भाग्य का भरोसा किया है और पीढियो से तेरे भाग्य ने तुझे इसी तरह छला है।

धरती पर जी-तोड मेहनत करने वाले भोले किसान ! तू पीढियों से आकाश के माया-जाल मे उलझा रहा है और पीढियों से आकाश के अन्धे मोह ने तुझे वरगलाया है। पानी की आशा से तूने आकाश की ओर देखा तो कभी आग वरसी, कभी काल वरसा, तो कभी सूखा वरसा। उन अभागे वरसो के अभागे क्षणो को तूने कितने दुखो से गिन-गिन कर विताया है। तेरी मेहनत से पैदा किये धान के खलिहानो को कभी ठाकुर के कारिन्दे लाट ले गये, तो कभी साहूकार के वही-खाते ने तेरी फसल का सफाया कर दिया। कभी तेरे लहलहाते खेतो को पाला मार गया तो कभी रोली की वीमारी ने तेरे आशा-भरे खेतो को वही का वही सुखा दिया।

◈ ◈ लेकिन तेरे आत्मघाती सब्र का तो जैसे कही अत ही नही है। कव तक ? आखिर और कब तक इस तरह सब्र के कडवे घूँट पीता रहेगा ? सारे जमाने मे चेतना का उत्फुल्ल प्रकाश आलोकित हो उठा है। खुदा के बन्दे, अव तो चेत ! निर्विलम्ब चेत ! यह चेतना और जागृति का युग है।

◈ ◈ नासमझ किसान ! इस वात को भी तू अच्छी तरह गाँठ वाँध ले कि हाथ पसार कर माँगने से तुझे खेत तो क्या खेत की मुट्ठी-भर धूल भी नही मिलेगी। धरती अपना पूरा मोल चाहती है। तुझे उसके लिये वही मोल चुकाना होगा। मोतियो से भी महगी इस माटी के कण-कण का तुझे कौल निवाहना होगा। तेरे अधिकारो को कुचलने के लिए जो कोई भी ताकत तेरे सीने पर चढ कर आये तो तुझे भी अपना जोर आजमाना होगा। खेत पर हल चलाने

हुए यदि किसी भी ताकत ने तेरी मेहनत की राह रोकने का दुस्साहस किया तो तुझे मेहनत करने वाले इन हाथो तक को कटाने के लिए तैयार रहना होगा। लेकिन तू तो पीढियो से इसी तरह चुपचाप सहता चला आ रहा है। जमाना गुजर गया तुझे अत्याचारो के विरुद्ध खून का एक कतरा भी दिये हुए। तेरी घातक उदासीनता ने धरती तक की आरक्त कान्ति को उससे छीन लिया है। विना तेरा खून लिए उसमे रग नही भरेगा।

◇ ◇ लेकिन तेरे आत्मघाती सब्र का तो कही कोई अत ही नही है। कव तक ? आखिर और कव तक इस तरह सब्र करता रहेगा ? सारे जमाने मे चेतना का उत्फुल्ल प्रकाश लहलहा रहा है। एक तू है जो अव तक सोया हुआ है। खुदा के वन्दे, चेत ! निर्विलम्ब चेत ! यह चेतना और जागृति का युग है।



माटी रौ हेलौ

पग-पग माटी लोई मांगै, सूखी हाळी बीज रे;
तीखा हळ लै हाली करमां, आई आखातीज रे;
माटी रौ हेलौ सांभळौ!
धरती रौ हेलौ साभळौ!

वांगौ व्है ज्यूं आभौ देखै, विलखै आल्या फाड़ै;
चोळौ वगनौ हुयग्यौ कीकर, धरती हेलौ पाड़ै,
सग्वौ व्है तौ कांन लगा सुण, माटी थनै बुलावै है;
नैंण हुवै तौ देख रूखड़ा, धरती हाथ हिलावै है,
तन माटी रौ सोच न कीजै, वैठी घड़ै विधाता,
रेत मुलक री घणी अमोलक, सुण रे जग रा अदाता;
माटी साटै मरणौ पड़सी, खाधै खांपण वाधलौ;
माटी रौ हेलौ सांभळौ!
धरती रौ हेलौ साभळौ!

जद थूं जांणै वाली माटी; चीर काळजौ सूंपै;
प्रांण सजीवण करै मिनख रा, भुक भुक पगळ्या चूंपै,

कण बींज्यां मण निपजें इण मे, बेला लाख मतीरा ;
अेक पूख अलेखा दाणा, लाखा गुण माटी रा ;
जे थू देवै कवळा टावर, धरती फूल हसावे है ;
जे थू तन री छाया करदै, माटी रूंख लगावे है,
जे थू इण मे सींचै पाणी, धरती सींचै काया,
जे थू देवै खात धरा नै, माटी अणगिण माया,
चढियौ फरज चुकावण सारू, दूध पियै री आंण लौ ;

माटी रौ हेलौ साभळौ !

धरती रौ हेलौ साभळौ !

ला जडामूळ सू इकलाब, पाताळ फोड परळै करदै !
करमौ मजदूर वणै करसा, धर रो इतिहास नवौ लिखदै ;
रे अेक मीप रै वदळै धरती, जुग - जुग सीस उगावैला ;
मरण अकारथ कदै न जावै, माटी मोल चुकावैला ;
जे हाथ कट्यौ धड नीचै पडगी, धरती धजा उठावैला,
माटी थारी लोई लेनै, मेहदी हाथ रचावैला ;
सौगन है काचा पूखां री, मरणै नै मगळ मानलौ ;
सौगन चदरी रै फेरां री, मरणै नै मगळ मानलौ ;
सौगन सावण रै हीडा री, मरणै नै मगळ मानलौ ;

धरती रौ हेलौ साभळौ !

माटी रौ हेलौ साभळौ !

◈ ◦ मेहनत और पसीने से खेती मे धान पकता है पर विना खून दिये उस पर अधिकार पाना मुश्किल है । खेत की अपमानित मिट्टी को अब तेरे पसीने की नही, तेरे खून की आवश्यकता है। वह हर कदम पर तुझ से तेरा खून माँगती है। हाळी बीज भी सूखी चली गई। पर यह आखातीज सूखी नही जाने पाये। हथेली पर जान, सिर पर कफन और कधो पर तीखे हल लेकर चलो। भोले किसान ! खेत की माटी का तुझे केवल यही अतिम सदेश है — उसकी आवाज सुन ! खेत की धरती का तुझे यही अतिम आदेश है — उसकी आवाज सुन !

◈ ◦ पगले ! सूने आकाश की ओर सूनी निगाह से क्या देख रहा है ? आँखे फाड़ कर चित्रलिखा - सा अदृश्य को खोजने की क्यो व्यर्थ चेष्टा कर रहा है ? तू आज इस तरह वहरा और विक्षिप्त-सा कैसे वन गया है ? यह खेत के किसान को खेत की मिट्टी का आह्वान है। कान है तो सुनता क्यो नही — वायु के सहस्र स्वरो मे मुखरित होकर माटी केवल तुझे ही वुला रही है। आखे है तो देखता क्यो नही — हरियाली के हर हिलते हुए पत्ते मे तुझे ही अपनी ओर वुलाने का सकेत है। खेत की प्यासी मिट्टी को तेरे पसीने की नही तेरे खून की आवश्यकता है। अपनी देह की क्षणभगुर मिट्टी का मोह त्याग, विधाता व अदृश्य हाथ वड़ी कुशलता से उसका सृजन कर रहे है। तेरे देह की माटी मे, देश की धरती का एक कण भी अधिक मूल्यवान है। खेत की जमीन के लिए खेत के किसान को मरना होगा। कधे पर कफन धरलो, माटी का यही अतिम सदेश है—उसकी आवाज सुन ! धरती का यही अतिम आदेश है — उसकी आवाज सुन !

◦ ◈ और कोई भी न जाने, तू तो अच्छी तरह जानता है कि खेत

की मिट्टी अपना कलेजा चीर कर तुझे सौंपती है। मनुष्य की देह मे नित्य - प्रति प्राणो का सचरण करती है। उसकी छाती मे हल की नोक से तू घाव की दरारे पैदा करता है, अपने पाँवो तले उसे रौंधता है, पर वह स्नेहमयी माता तेरे पावो को सहलाती है। तू गिनती के कुछ दाने बिखेरता है, वह वापिस तुझे मनो निपजाकर देती है। इसी मिट्टी मे तेरे लिए लाखो बेले और लाखो मतीरे पैदा होते है — मीठे, मिसरी के समान। एक पूख और दाने अगणित। कितने गुण है इस माटी के—लाखो, करोडो ! यदि तू अपने सुकुमार बच्चे माँ – धरती के हवाले करता है तो वह सुकोमल फूलो को प्रस्फुटित करती है। तू अपने छोटे - से तन की छोटी - सी छाया इस पर करता है तो वह असख्य वृक्षो के बहाने, शीतल छाया के निमित्त अपना फर्ज अदा करती है। यदि तू इसमे पानी सीचने का दावा पेश करता है तो वह प्राणीमात्र मे जीव का सिचन करती है। हर देह के हर प्राण का वह पोषण करती है। धरती को उपजाऊ बनाने के लिए यदि तू उसमे खाद का पुट देता है तो वह प्रतिदानस्वरूप अपरिसीम माया वापिस लौटाती है। माँ-धरती के अहसानो का न तो कोई आरभ ही है और न कोई अत ही। पर तुझे अपना फर्ज अदा करना है। माँ के दूध की सौगध लो कि तुम धरती के चढे हुए फर्ज को उतार कर ही रहोगे। खेत की मिट्टी को पानी या पसीने की नही, तेरे खून की आवश्यकता है। उसका यही पहिला और अतिम सदेश है — उसकी आवाज सुन !

◇ ◈ युगो से शोषित किसान ! तुझे ही अब आमूल क्राति का अग्रदूत बनना है। पाताल के अतिम तहो को फोडकर प्रलय का गर्जन मचाना है, तुझे ! इस पुरानी दुनिया के नये इतिहास का यह नया अध्याय तुझे ही लिखना है कि किसान और मजदूरो के हाथ जब

इस दुनिया को संवारते है तो उन्ही के हाथो उसका संचालन भी हो। धरती के स्वभाव को तुझ से अधिक कौन पहिचानता है ? वह कण का मन निपजाती है तो वह तेरे एक शीश के बदले मे लाखो शीश उगायेगी। युग-युग तक शीश उगायेगी। तेरा मरना कभी अकारथ न जायेगा — माटी सो गुने रूप मे उसका मोल चुकायेगी। यदि नंगी देह के टुकड़े हो गये, देह मे कट कर हाथ अलग हो गये तो धरती स्वयं ध्वजा उठा कर आगे बढेगी—यह निश्चय जान। मिट्टी मे मिला हुआ तेरा खून, मेंहदी के हर पत्ते मे अपना रंग दिखलायेगा। फिर जीने का कैसा मोह ? मरने का कैसा भय ? सौगंध है तुम्हे कच्चे फूलो की— मृत्यु का मंगलमय आह्वान करो। सुकोमल बेलो की सौगंध है तुम्हे — मृत्यु का मंगलमय आह्वान करो। चंवरी के पावन फेरो की सौगंध है तुम्हे—मृत्यु का मंगलमय आह्वान करो। सावन के पवित्र झूलो की कसम है तुम्हे — मृत्यु का मंगलमय आह्वान करो।

◈ ◇ खेत की जमीन के लिये खेत के किसान को मरना होगा। माटी का यही अंतिम संदेश है—उसकी आवाज सुन ! धरती का यही अंतिम आदेश है — उसकी आवाज सुन !



सात जुगां रौ लेखौ

सेसनाग समदर मे सूतौ, लेतौ नीर हीत्रोळा रे,
सागर लेखौ लेवतौ ने नागण गिणती छौळा रे,
लैर-लैर मे धमचक लागी, पाणी जाय पाळ नै लडियौ,
काछब पूछ्यौ माछळी, काई चूक पडी के बाटौ पड्यौ ?

समदर देख्यौ सूरज कानी, गरज्यौ नीर उछाळौ दै,
के दै चंदा गिगन बीचळौ, के परभाती तारौ दै,
भरी कचेडी भूडौ लागै, पत राखण पनियारौ दै,
लिया-दिया सू काम सरै है, पाछौ नीर उधारौ दै,
सूप्यौ माल सरप नी खावै, तोप गिटै नी गोळा रे,
सेसनाग समदर मे सूतौ, लेतौ नीर हिंत्रोळा रे।

लेण-देण री बाता मत कर, दुनिया सुणती करै तमासौ,
थारी नीव पताळा नीचे, म्हारौ थेट गिगन मे वासौ,
लहरा लेती हियै हिलोळा, चलती चाल पलटचौ पासौ,
प्रीत डोर मे बधगी किरणा, मोत भरोसै दियौ दिलासौ ;

आयौ मेघ मांगनैं लेग्यौ, प्रीत करै सो भोळा रे;
सेसनाग समदर में सूतौ, लेतौ नीर हिवोळा रे;
धूम ताबड़ै कळभळ करती, तपती देखी धरती;
पान-पांन रुंखा रा झड़ग्या, वेलड़िया वळवळती;
पिणघट री पिणियारचा विलखी, देखी हिवड़ौ भरती;
सुण रे सरवर पाणी लेगी, माटी तिरसा मरती;
मोत्या री झड़ विरखा वरसी, भरग्या ताल पिछौला रे;
भावौ-भाव लियां जा पाछौ, किसी ताकड़ी तोळा रे;
सेसनाग समदर में सूतौ, लेतौ नीर हिवोळा रे।

धरती बोली म्हैं करसां नैं, हळ ले खेत खडाया;
चीर काळजौ काया सूंपी, कण-कण बीज ववाया,
लोही सीच्यौ लीली राखी, म्है मोती निपजाया;
पाक्या जद नक की रखवाळी, करसा नै सभळाया;
पूख-पूख वांहराजी लेग्या, ठाकर लेग्या होळा रे,
सेसनाग समदर में सूतौ, लेतौ नीर हिवोळा रे।

सूरज मेघ समदर माटी, बोली मोसा देती;
लाणत रे धरती रा करसा, लोग लूटग्या खेती;
देख रती भर रह नी जावै, मिनख-मिनख में छेती;
चेत-चेत माटी रा माणस, दुनिया जागी चेती;

भूखा मरता लुकता - भुकता , लाजै मिनख अडोळा रे ;
सेसनाग समदर मे सूतौ, लेतौ नीर हिबोळा रे ।

◇ ◈ सात जुगो की दीर्घ अवधि के पश्चात् आज इतना ही लम्बा-चौडा हिसाब हो रहा है—समदर के पानी का हिसाब !

◈ ◈ शेषनाग समुद्र मे निर्विघ्न सो रहे थे। समुद्र का पानी निरतर हिलोरे ले रहा था। इन सब उपक्रमो के बीच सागर अविचलित भाव से हिसाब माग रहा था। ओर नागिन पानी की एक - एक लहर गिनते हुए हिसाब दे रही थी। लम्बे हिसाब का लम्बा ही गोटाला था। परिणाम के भय से लहर - लहर मे धमचक उत्पन्न हो गई। पानी तट से जाकर उलझ पडा। कछवे ने मौका देख कर मछली से दरियाफ्त करना चाहा — हिसाब मे कही कोई गलती तो नही रह गई है ? कही घाटा तो नही हो गया ? समदर का इतना पानी आखिर कहाँ गया ?

◇ ◇ अकस्मात समदर की गहन स्मृति से एक भेद प्रकट हुआ। उसने तत्काल ही सूर्य की ओर दृष्टिपात किया। गर्जन की आवाज करता हुआ उसका पानी गर्व के साथ ऊपर की ओर उछला और अभिमान - भरे स्वर मे उसकी तरफ देख कर कहने लगा—बहुत समय हो गया तुम्हे, मुझ से पानी लिए हुए। आज हिसाब हो रहा है। पानी के बदले मे या तो वापिस पानी का भुगतान करो, नही तो नील गगन मे सुशोभित चद्रमा और उसकी चाँदनी देकर अपना कर्ज अदा करो। या प्रभात का चमकीला तारा देकर ऋण से मुक्त होने की चेष्टा करो। इस भरी कचहरी मे क्यो स्वय को अपमानित कर रहे हो ? तुम्हारी इज्जत तुम्हारे हाथ मे है। उसे निष्कलक बनाये रखने का प्रयत्न करो। लेन - देन की इस दुनिया मे, परस्पर लेने - देने से ही काम सरता है। जो पानी मुझ से माँग कर ले गये थे उसे वापिस लौटा

दो। सौंपा हुआ माल तो जहरीला साँप भी नहीं खाता। अपने भीतर समाये हुए गोलों को तोप भी उदरस्थ नहीं करती। वापिस ज्यों का त्यों उगल देती है।

◇ ◇ सात जुगों की दीर्घ अवधि के पश्चात् आज उतना ही लम्बा-चौडा हिसाब हो रहा है — समदर के पानी का हिसाब। शेषनाग समुद्र मे निर्विघ्न सो रहे थे। समुद्र का पानी निरन्तर हिलोरे ले रहा था।

◇ ◇ सूर्य ने क्रोधित होकर समुद्र को वापिस उलहना दिया कि लेन-देन के इस व्यर्थ रोने से तेरे कुछ भी हाथ नही लगेगा। दुनिया सुनेगी तो क्या कहेगी। क्यो निरर्थक तमाशा बनते हो। तेरी क्या हैसियत कि तू मुझे कुछ दे और मुझे क्या कमी कि तुझ से कुछ माँगू। गगन के सातवे आसमान पर मेरा निवास है और तुम्हे धरती पर भी जगह नही। तेरी नीव — ठेट पतालो के नीचे है। मै तो केवल प्रेम के कारण ही ठगा गया। लहरे तेरी मुझ से प्रेम पाने को प्रतिपल बेचैन हो तडफ रही थी। मुझ से उनकी तड़फन देखी न गई। किरणो के सहारे वे मुझ तक आने के लिए कितनी विकल थी—लहरों के प्रेम-प्रदर्शन मे किरणे मेरी दया से आर्द्र हो गई। अपने मे समेट उन्हे मुझ तक खीच लाई। पर बादल पहिले ही से लहरो के प्रेम मे उलझा था। याचना करने पर मैने लहरो को बादल के सुपुर्द कर दिया। प्रेम करने वाले ऐसे ही नादान और भोले होते है। बादल से अपना हिसाब-किताब माँगो।

◇ ◇ सात जुगों की दीर्घ अवधि के पश्चात् आज उतना ही लम्बा-चौडा हिसाब हो रहा है —समदर के पानी का हिसाब। शेषनाग समुद्र मे निर्विघ्न सो रहे थे। समुद्र का पानी निरन्तर हिलोरे ले रहा था।

◇ ◇ सूरज के वाद वादलो से हिसाब मॉगा गया तो उन्होने गर्जना के स्वर मे इस तरह अपना हिसाब पेश किया सूरज की किरणो से मागकर मैने पानी लिया था, इस सच्चाई से मै तनिक भी इन्कार नही करता। लेकिन जव मैने बिजली के प्रकाश मे देखा कि सूरज की तप्त आँच मे पृथ्वी सारी सिक रही है, अगारे वरसाने वाली धूल धरती के समस्त जीवधारियो को उद्विग्न कर रही है, वृक्षो के पत्ते सारे झुलस कर आँच मे झड गये है, पेडो की जुदाई मे पीले पड कर विखर गये है, वेले सारी जल कर राख हुई जा रही है, जली हुई वेलो और ठूठो के समान खडे उन पेडो का नीरव आर्तनाद मुझ से सहन नही हुआ, और देखा मैने— पनघट की पनिहारियो को खाली घडे वापिस लौटते हुए, दुख, प्यास और तेज गर्मी के कारण उनकी कजरारी आँखे आँसुओ से तिरोहित हो उठी थी। तब मुझे से सहा नही गया। मेरा हृदय फट पडा—पानी की अगणित वौछारो मे। हे समदर ! मैने तो प्यास के कारण कराहती हुई धरती को पानी सौप स्वय को विलकुल खाली कर दिया। खारे पानी को अमृत के समान मीठा करके मैने वापिस लौटाया। सारी दुनिया गवाह है कि मैने मोतियो के समान वरखा की झडी लगा दी थी। तालाब भर गये। पिछोले भर गये। नदी और नाले प्रवहमान हो गये। जिस भाव से पानी लिया था उसी भाव से देने को तैयार हू। कौनसे वटखरे और वह कोनसा तराज़ू था ? कर ले अपना हिसाव चुकता।

◇ ◇ सात जुगों की दीर्घ अवधि के पश्चात् आज उतना ही लम्बा-चौडा हिसाव हो रहा है— समदर के पानी का हिसाव। शेषनाग समुद्र मे निर्विघ्न सो रहे थे। समुद्र का पानी निरतर हिलोरे ले रहा था।

◇ वादलो के वाद धरती से हिसाव तलव हुआ। वोली—अमृत और मोतियो के समान वादलो ने मुझ पर करुणा की वौछारे की,

उसके लिए मै बहुत ही कृतज्ञ हू , पर वह पानी मैंने अपने तई सीमित नही रखा। किसान ने अपने भूखे बच्चो और अपने भूखे पेट की दुहाई देकर मुझ से धान की याचना की। मुझे माँ कह कर सबोधित किया। मैने तब ममता - वश उसे अपनी छाती पर हल चलाने तक की स्वीकृति देदी। अपना कलेजा चीर कर मैने उसे जीवन - दान दिया। अपने कण - कण मे मैने उससे बीज बोवाये। अपने हृदय का खून देकर मैने किसान के खेतो को हरा - भरा रखा। पानी की बूँदो के बदले मे प्राणवत मोती निपजा कर दिये। धान के पकने तक मैने उसे अपनी छाती से चिपका कर रखा , उसकी पूरी तरह रखवाली की और अत मे पकने पर उन्हे किसान के हवाले कर दिया। पर मेरे देखते - देखते साहूकार ने उसके सारे पूँख छीन लिये। ठाकुर के कारिन्दे जबरदस्ती उससे बालिए ले गये।

◇ ◇ सात जुगो की दीर्घ अवधि के पश्चात् आज उतना ही लम्बा - चौडा हिसाब हो रहा है — समदर के पानी का हिसाब। शेषनाग समुद्र मे निर्विघ्न सो रहे थे। और समुद्र का पानी निरतर हिलोरे ले रहा था।

◇ ◇ धरती द्वारा हिसाब की सफाई हो जाने के पश्चात् सूरज , बादल समुद्र और धरती , सब ने मिल कर सामूहिक रूप से किसान को उल-हना दिया धिक्कार है तुझे ! धिक्कार है तेरे मनुष्य जीवन को ! धिक्कार है तेरी अकारथ मेहनत को कि लोग तेरे देखते - देखते तेरी खेती लूट ले गये और तू कुछ भी प्रतिकार न कर सका। तेरी ही कायरता के कारण आज मनुष्य और मनुष्य के बीच विषमता की दरारे पैदा हो गई है। अब यह तेरी ही जिम्मेदारी है कि मनुष्य और मनुष्य के बीच इस अमानवीय अतर को समाप्त कर दे। हे मिट्टी के अधिष्ठाता , चेत ! निर्विलम्ब चेत ! सारी दुनिया जाग उठी है। दुनिया

सारी चेत गई है। एक तू है जो अब तक अधा बना हुआ है । देख अपने चारो ओर देख तो सही ये भूख से मरते हुए , लाज से छिपते - झुकते ये अगणित निरावृत मनुष्य अपमानित होकर जिन्दगी गुजार रहे है । अब यह तेरी ही जिम्मेदारी है कि मनुष्य और मनुष्य के बीच इस अमानवीय अतर को निर्मूल समाप्त कर दे ।

◇◇ सात जुगो की दीर्घ अवधि के पश्चात् आज उतना ही लम्बा चौड़ा हिसाब हो रहा है — समदर के पानी का हिसाब । शेषनाग समुद्र मे निर्विघ्न सो रहे थे । और समुद्र का पानी निरतर हिलोरे ले रहा था ।



माटी थनै बोलणौ पड़सी

मून राखिया मिनख मरैला
धरती नेम तोडणौ पडसी
करणौ पडसी न्याय छेडलो, माटी थनै बोलणौ पडसी !

कुण धरती रौ अदाता है, कुण धरती रौ धारणहार ?
कुण धरती रौ करता-धरता, कुण धरती रै ऊपर भार ?
किण रै हाथा खेत-खेत मे, लीली खेती पाकै है ?
किण रै पाण देस री गाडी, अबविच आती थाके है ?
कहणौ पडसी खरौ न खोटौ, साचौ भेद खोलणौ पड़सी
माटी थनै बोलणौ पडसी !
मून राखिया मिनख मरैला
धरती नेम तोडणौ पडसी !

थूं जांणै है पीढी-पीढी, खेत मुलक रा म्हे खडिया
थू जाणै है काळ बरस मे, भूख मौत सू म्हे लडिया
थू जाणै है सिंघासण मे, हीरा-पन्ना म्है जडिया
थू जाणै है कोट-कांगरा, मैल माळिया म्है घडिया

म्हारी खरी कमाई किनगी, गेली थनै तोलणो पडसी

माटी थनै बोलणो पडसी !

मून राखिया मिनख मरैला

धरती नेम तोडणो पडसी !

आ बात वडेरा कैता हा, धरती धीरा री थाती है

माटी अै करसा झूठा है, यांरी नां साची छाती है

ठडी माटी रा मुडदा है, दिवलै री बुझती बाती है

माटी रा म्हे रगरेजा हा, ज्यां कारण धरती राती है

जै करसा मोल चुकाना व्है तौ धड नै सीस तोलणो पडसी

माटी थनै बोलणो पडसी !

मून राखिया मिनख मरैला

धरती नेम तोडणो पडसी !

जद मेंह-अधारी राता मे, तूटौडी ढाणी चवती ही

तो मारू रा रगमेला मे, दारू री मैफिल जमती ही

जद वा ऊनाळू लूआ मे, करसे री काया बळती ही

तौ छैलभवर रै चौबारै, चौपड री जाजम ढळती ही

इण भरी कचेडी देण गवाही, ऊभा-धडी दौडणो पडसी

माटी थनै बोलणो पडसी !

मून राखिया मिनख मरैला

धरती नेम तोडणो पडसी !

◇ ◇ माटी को सँवारने वाले किसान के लिए स्वय माटी को ही न्याय का अन्तिम फैसला देना होगा। मुँह से बोल कर फैसला देना होगा। चिर मौन का अटल नियम तोड कर फैसला देना होगा। यदि अब इस तरह मौन साधे रही तो लोग मर मिटेगे।

◇ ◇ फैसला देना होगा कि इस ससार का अन्नदाता कौन है ? कौन है वह जो अपनी मेहनत से अपने ही पेट के गाँठ बाँध कर सारे ससार का पालन करता है ? कौन है वह जिसकी मेहनत के आसरे इतना लम्बा-चौड़ा ससार टिका हुआ है ? वह कौन है, किसकी वह मेहनत है जिसके जरिये दुनिया के सारे कार्यो का सचालन होता है। और···और वह कौन है जो इस धरती पर व्यर्थ का भार बना हुआ है ? मेहनत — कुछ नही, पर आराम, ऐश्वर्य और विलास—सब कुछ ! और किसके हाथो का वह जादू है जिसके स्पर्श से खेत-खेत मे हरी खेती लहलहा उठती है ? और कौनसी वह प्रतिगामी ताकत है जो देश की प्रगति को थाम रखने की चेष्टा मे निरतर सलग्न है ? खरा अर खोटा जो भी जानती हो वह आज तुम्हे कहना ही होगा ! सच्चाई का सच्चा भेद तुम्हे खोलना ही होगा ?

◇ ◇ माटी को सँवारने वाले किसान के लिए, अब तो माटी, तुम्हे बोलना ही पडेगा ! अपने चिर मौन का अटल नियम अब तुम्हे तोड़ना ही होगा ! यदि अब इस तरह मौन साधे रही तो लोग मर मिटेगे।

◇ ◇ तू जानती है—इसलिये तुझे ही फैसला देना होगा कि पीढी-दर पीढी सारे देश के सारे खेत हम लोगो ने जोते है। हमने ही उनमे बीज बोये है। और हम ही ने उनमे हरियाली का हरा समुद्र लहराया है। और तू जानती है कि इतना सारा धान निपजाने के बावजूद जब जब काल पडा, हमे ही सब से पहिले उस धान से वचित रहना पडा है। तू जानती है कि दुनिया की भूख को मिटा कर भी हम तो हमेशा भूख से लडते रहे है। सारी दुनिया को जीवन देकर भी हमने हर पल और हर घडी मौत से सघर्ष

किया है। तूने स्वय अपनी आखो देखा है कि हमारी गरीबी के हाथो ही सोने - चाँदी के सिहासनो का निर्माण हुआ है। और हमारी निर्धनता की कारीगरी ने उन सिहासनो मे हीरे और पन्ने जडे हैं। तू जानती है कि हमारी झोपडियो के काँटो से ही राजमहल, गढ - कोटो और महलो की सृष्टि हुई है। हमारे खरे पसीने की कितनी खरी कमाई है, इसका लेखा - जोखा अब तुम्हे ही करना होगा !

◈ ◈ माटी को सँवारने वाले किसान के लिए, अब तो माटी, तुम्हे बोलना ही पडेगा ! अपने चिर मौन का अटल नियम अब तुम्हे तोडना ही होगा ! यदि अब इस तरह मौन साधे रही तो लोग मर मिटेंगे।

◈ ◈ मूँछो पर ताव देकर धरती के 'स्वामी' ने किसान की ओर तिरस्कार-पूर्ण दृष्टि से देख कर कहा " हमारे पूर्वज तो केवल एक ही बात जानते थे और उसी एक बात को वे सदियो से कहते चले आ रहे है कि जिसके हाथ मे ताकत है, जमीन उसी के पाँवो नीचे रहेगी। जमीन पर मेहनत का नहीं वीरता का कब्जा है और कब्जा रहेगा। ये किसान तो बिलकुल झूठे है और झूठा है कच्ची छाती के इन कायर लोगों का यह दावा भी। ठडी माटी के बेजान मुर्दे है ये तो ! बुझते हुई दिवले की बुझती हुई बाती के समान निस्तेज है इनका जीवन ! माटी के रगरेज तो हम है जिन्होने खून के पक्के रग से धरती की चुन्डी को अमर बना दिया है। यदि अकिचन किसानों को धरती पर अधिकार जताना है तो वे अपनी मेहनत का दावा छोड कर कटे हुए सिर, कटे हुए धड और खून से सनी आँतडियो का नाप-जोख हमारे सामने लाये।

◈ ◇ माटी का सँवारने वाले किसान के लिए, हे माटी, अब तुम्हे बोलना ही होगा ! तुम्हे अपने चिर मौन का अटल नियम अब तोडना ही होगा ! यदि अब इस तरह मौन साधे रही तो लोग मर मिटेंगे।

[illegible] किसान की टूटी हुई झोंपड़ी चू रही थी और [illegible] —दिन-रात खेत में जान खपाने वालों को [illegible] तब दूसरों की मेहनत [illegible] में [illegible] की [illegible] उड़ रही [illegible] हो जाते ! उधर गरीबी की तप [illegible] थी तो उधर छैलभवर [illegible] , चौपड़ के रंगीन दाव चल रहे थे ! [illegible] किये बिना ही तुम्हें [illegible]

[illegible] विनाश के लिए , हे मार्टा , अब तुम्हें बोलना ही होगा ! तुम्हें [illegible] मौन का अटल नियम अब तोड़ना ही होगा ! [illegible] लोग मर मिटेंगे ।

इंकलाब री आंधी

अधार घोर आधी प्रचड
आ धुआधोर धव-धव करती
आवै है उर मे आग लिया, गढ कोटा बगळा नैं ढहती !

बैताळ वतूळौ नाचै है, जिण रै आगं सदेस लिया
राती नै काळी पीळी आ, कुण जाणै कितरा भेख किया
वे सख वजै सरणाटा रा, कोई गीत मरण रा गावै है
डकै री चोट करै भीता, वायरियौ ढोल वजावै है
विकराळ भवानी रमै झूम, धरती सू अबर तक चढ़ती
अधार घोर आधी प्रचड, आ धुआधोर धव-धव करती
आवै है उर मे आग लिया
गढ कोटा बगळा नै ढहती !

नीवा रै नीचै दवियोड़ी, जुग-जुग री माटी दै झपटौ
लै उडी किला नै जडामूळ, पसवाड़ौ फेर लियौ पलटौ
तिणकै ज्यू उडगी तरवारा, गोचै रौ रूप कियौ भालां
रूखा रै पत्ता ज्यू उडगी, वै लाज वचावण री ढाला

वा पड़ी उकरड़ी मे बोतल, मद पीवण रा प्याला उडग्या
मेफिल रा उडग्या ठाट-बाट, वै महला रा रखवाळा उडग्या
वे देख जुगा रा सिणगार, रड़वड़ता पड़िया ठोकर मे
वे ऊचा लटक अडम्बर, नहि भेलै अम्बर नै धरती
अधार घोर आधी प्रचड . आ धुआधोर धव-धव् करती
आवै है उर मे आग लिया
गढ कोटा बगळा नै ढहती !

आंधी आ अजब अनूठी है, डूगर उडग्या सिल उडी नहीं
सिमरथ वै ढहग्या रग-महल, हळकी झूपडिया उडी नही
उड गयौ नवलखौ हार देख, मिणिया री माळा पडी अठै
उड गई चूडिया सोनै री, लाखा रौ चुड़लौ उडै कठै
उड गया रेसमी गदरा वे, राली रै रज नही लागी
आ फिरै कामेतण लडाभूंम लखपतणी मरगी लड्थड़ती
आवै है उर मे आग लियां
गढ़ कोटा बंगळा नै ढहती !

अधकार मत जाण बावळा, इकलाव री छाया है
इण भाग बदळिया लाखा रा, केई राजा रक बणाया है
रै आ वा काळी रात जका, पूनम रौ चाद हसावै है
रै आ वा वाल्ही मौत जका, मुगती रौ पथ बतावै है

रे आ वा भोळी हसी जका, के मरती वेळा आवं है
इण धुआधार रै आचळ मे इक जोत जगै है जगमगती
अधार घोर आधी प्रचड , आ धुआधोर धव-धव करती
आवै है उर मे आग लिया
गढ कोटा वगळा नै ढहती

◇ एक प्रचड आधी आ रही है ! भयकर आधी ! घोर अधकारपूर्ण ! गति मे उसके धुँए के गोटे उठ रहे है । धव-धव की आवाज करता हुआ लपटो का भयावह चीत्कार सर्वत्र फैलता जा रहा है । अतराल मे उसके आग है , दहकते हुए अगारे है , धधकती हुई लपटे है । गढ , किले , कोट और वगलो को ढहाती हुई यह आगे बढती जा रही है ! बढती ही जा रही है !

◇ ◇ इस ध्वसात्मक ऑधी की हरावल मे , विकराल नृत्य करता हुआ यह ताल-विहीन निर्बध अधड तो उसका सदेशवाहक है । कभी लाल, कभी पीली तो कभी काली , कभी कुछ तो कभी कुछ । न जाने कितने वेश और कितने वाने पलटती हुई यह अविराम गति से आगे बढती ही आ रही है । सन्नाटो के ये सनसनाते भीषण स्वर तो जैसे अगणित शखो की अगणित आवाजो को प्रतिध्वनित कर रहे है । यह मौत की आवाज है ! ये मौत के स्वर है ! दीवारो पर डको की चोट गूँज रही है । ये मौत के नगाडे है ! हवा तो जैसे ढोल का तीव्र गर्जन पैदा कर रही है । ये मौत के ढोल है । यह मोत का गर्जन है ! यह विकराल भवानी अपना विकराल ही रूप धारण किये धरती और अवर के बीच सर्वत्र फैल गई है । विकराल है उसका यह खेल ! विकराल है उसका यह अनोखा नृत्य !

◇ ◇ एक प्रचड ऑधी आ रही है ! भयकर ऑधी ! घोर अधकारपूर्ण !

गति से उसके धुँए के मोटे उठ रहे हैं। धव - धव की आवाज करता हुआ उसका यह भयावह चीत्कार सर्वत्र फैलता ही जा रहा है। अंतराल में उसके आग हैं, दहकते हुए अंगारे हैं, धधकती हुई लपटे हैं। गढ, किले, कोट और कंगूरों को ढहाती हुई यह प्रतिपल आगे बढती जा रही है! बढती ही जा रही है!

◇◈ गर्वोन्नत किलो के नीचे युग - युग से दबी हुई जिन्दा मनुष्यों की वह अदृश्य माटी इस आँधी का स्पर्श पाकर आज फिर से जिन्दा हो गई है। एक ही झोंके ने ज्वालामुखी के समान ऊपर उठ कर उसने किलो को जड़ से उखाड फेंका है। सारे जमाने को उसने उलट-पुलट कर रख दिया है। तलवारो की धार पर राज्य करने वालो की वे चमचमाती तलवारे तिनको के समान इस आँधी मे उडी चली जा रही है। भालो की तीखी नोक से शासन करने वालो के भाले भी तृणवत उडे चले जा रहे हैं। लाज बचाने वाली वे ढाले आज अपने स्वामियो को अनाथ करके वृक्षो के अकि-चन पत्तो के समान उडी चली जा रही हैं। मस्ती का समुद्र लहराने वाली वह बोतल कूडे - करकट के ढेर पर पडी आज उन मतवालो का उपहास कर रही है। अधरो का स्पर्श कर इतराने वाले वे मद - भरे प्याले आज इस आँधी मे निरुद्देश्य उडे चले जा रहे हैं। रंगीले राजाओ की वे रंगीन महफिले आज अपने ठाट - बाट के साथ हवा हो गई है। हवा हो गये वे अटूट महल और महलो के सत्ताधारी वे रक्षक भी। यह देख—ये सिंहासन हैं—युग - युग की शक्ति के प्रतीक, शासन के प्रतीक! ये आज इस तरह ठोकरो मे रडवड रहे हैं। और यह देख—ये मुकुट है! राज्य करने वाले राजा के सिर पर शोभा देने वाले मुकुट! सूने आकाश मे तीव्र गति से उडे चले जा रहे है। युग - युग से शासन करने वाले उन सत्ताधारी राजे - महाराजाओं को न आकाश मे कहीं ठौर है न धरती पर ही कोई आश्रय।

◈◇ एक प्रचंड आँधी आ रही है! भयंकर आँधी! घोर अन्धकारपूर्ण!

गति मे उसके धुए के गोटे उठ रहे है। धव - धव की आवाज करता हुआ लपटो का भयावह चीत्कार सर्वत्र फैलता जा रहा है। अतराल मे उसके आग है, दहकते हुए अगारे है, धधकती हुई लपटे है! गढ, किले, कोट और बगलो को ढहाती हुई यह आगे बढती जा रही है!

◇ ◇ बडी अनूठी है यह ऑधी और अनूठे ही है इसके सारे परिणाम भी! पर्वत उड गये पर एक छोटी - सी शिला अपनी जगह से हिली तक नही। बडी अनूठी है यह ऑधी जो एक ही झटके मे समर्थ रग-महलो को ढहा गई, लेकिन घास - फूस की हलकी झोपडियॉ इस तूफान मे ज्यो की त्यो बनी है। यह देख—इस ऑधी मे यह नवलखा हार तो उडा चला जा रहा है पर कच्चे मिनका की विजय - माला श्रम के गले मे वैसी ही झूम रही है। सोने की चूडियॉ झनझनाती उडी चली जा रही है किन्तु लाख का बना हुआ यह अमर सुहागा चुडला मेहनत की कलाई छोड कर कहॉ जाय? कैसे जाय? इस ऑधी के झोके से रेगमीन गदरे उड गये, मसनद और गलीचे उड गये पर गरीब की राली को इस भयकर ऑधी मे धूल का एक कण तक न लगा। अनूठी है यह ऑधी और अनूठे ही है इसके सारे परिणाम कि लाखो कि सम्पत्ति वाला वैभव तो एक पल मे लडखडा कर मात के हवाले हो गया और मेहनत पर जीने वाली इन्सानियत, जिन्दगी की ताल पर मेहनत के तराने गाती हुई लूम - झूम रही है। मौत को चुनौती दे रही है।

◇ ◇ एक प्रचड आंधी आ रही है! भयकर ऑधी! घोर अधकारपूण! गति मे उसके धुए के गोटे उठ रहे है। धव-धव की आवाज करता हुआ लपटो का भयावह चीत्कार सर्वत्र फैलता जा रहा है। अतराल मे उसके आग है, दहकते हुए अगारे है, धधकती हुई लपटे है! गढ, किले, कोट और बगलो को ढहाती हुई यह आगे बढती जा रही है! बढती ही जा रही है!

◇ ◇ अजब-अनूटी है यह आँधी और अनूठे ही है इसके सारे परिणाम भी। सर्वत्र अधकार छा गया है — पर वह अधेरा नही है, इन्कलाब की दीप्त छाया है। इस तूफान की इस तूफानी छाया ने लाखो इसानो के भाग्य वदले है। राजाओ को दर-दर का भिखारी वना दिया है और दर-दर के भिखारियो के याचक हाथो मे शासन की बागडोर सभला दी है। यह आँधी वह काली रात है जिसके अक मे पूनम का ज्योतिर्मय चाँद मुस्कुरा रहा है। यह अनूठी आँधी एक अनूठी ही मौत के समान है जो इसान को मुक्ति का मार्ग वतलाती है। यह वह भोली मुस्कान है जो मौत की विभीषिका के वीच भी जिन्दगी के अधरो पर खिल उठती है। इस अनूठी आँधी के धुँआधोर आँचल की ओट मे एक सुखद जोत जगमगा रही है। और जिसकी जगमगाहट मे चमक रहा है मेहनत करने वाले इसानो का उज्ज्वल भविष्य!

◇ ◇ एक प्रचड आधी आ रही है! भयकर आँधी! घोर अन्धकारपूर्ण! गति मे उसके धुए के गोटे उठ रहे है, धव-धव की आवाज करता हुआ लपटो का भयावह चीत्कार सर्वत्र फैलता जा रहा है। अतराल मे उसके आग है, दहकते हुए अगारे है, धधकती हुई लपटे है! गढ, किले, कोट व कगारो को ढहाती हुई यह आगे वढती जा रही है! वढती ही जा रही है!



लिछमी

ओढचां जा चीर गरीबां रा
धनिका रौ हियौ रिझाती जा
चुंदड़ी रौ अेक झपेटौ दै, अै लिछमी दीप बुझाती जा !

हळ बीज्यौ सींच्यौ लोई सूं, तिल तिल करणौ छीज्यौ हौ
ऊनै बळबळतै तावड़ियै, कळकळतौ ऊभौ सीझ्यौ हौ
कुण जांणै कितरा दुख झेल्या, मर-खपनै कीनी रखवाळी
काटा-भट्टा मे दिन काढचा, फूलां ज्यूं लिछमी नै पाळी
पण बणठण चढगी गढ-कोटां, नखराळी छिण मे छोड साथ
जद पूछ्यौ कारण जावण रौ, हम मारी वैरण अेक लात
अधमरिया प्राण मती तड़फा' सूळी पर सेज चढाती जा
चुंदड़ी रौ अेक झपेटौ दै
अै लिछमी दीप बुझाती जा !

जै घड़ी विधाता रूपाळी, सिणगार दियौ है मजदूरां
चन्दी नाजुक तीमणियां, गळहार दियौ है मजदूरां

[illegible]

कोई मे बांटी बांट-बांट, जिण मेहंदी हाथ लगाई ही
फूलां ज्यूं कवळा टाबरिया, चरणां में भेट चढाई ही
घर री बू-बेटचा बिलखी, पण लिछमी थनैं सजाई ही
इक थारी जोत जगावण नैं, घर-घर री जोत बुझाई ही
पण अैन दिवाळी रै दिन बैरण, माम्ही छाती पग धरती
ठुमकै सूं चढी हवेली मे, मन मरजी रा मटका करती
जे लाज बेचणी तेवडली, तो पूरो मोल चुकाती जा
चुडली रो अेक झपेटो दै
अे लिछमी दीप बुझाती जा !

इतरा दिन ठगनी रैई है, थू भोळी बण छळ जाती ही
खाती ही रोटी माटी री, पण गीत हीरै रा गाती ही
जे हमे जाण रो नांम लियौ, तौ जीभ डाम दी जावैला
जे निजर उठी मैलां कानी, तौ आंख फोड दी जावैला
जे हाथ उठायौ हाकै नै, नागोरी गहणौ जड दाला
जे पग धर दीना सेठां घर, तौ पगा पागळी कर दाला
महलां गढ कोटां बगळा रा, वे सपना हमे भुलाती जा
चुडली रौ अेक झपेटो दै
अे लिछमी दीप बुझाती जा !

◇ ◈ दीप-मालाओ की जगमगाहट के भीतर तेरे हृदय की कालिमा साफ झलक रही है। हे लिछमी, अब उसे छिपाने की व्यर्थ चेष्टा न कर ! स्वय नगे रह कर भी ये गरीब अपनी मेहनत के हाथो तेरा शृगार करते है, बेशकीमती वस्त्रो से तुझे सजाते है। पर अपनी अलकृत वेश-भूषा से तू धनवानो को रिझाती है। उनका मन बहलाती है। दीप-मालाओ की जगमगाहट के भीतर तेरे हृदय की कालिमा साफ झलक रही है। हे लिछमी, तुझे कुछ भी शर्म-हया है तो अपनी चुदडी के एक ही झपेटे मे बुझा दे इन दीप-मालाओ को ! बुझा दे, इस जगमगाती कालिमा को !

◇ ◈ आज अपने मदभरे यौवन मे इठलाती हुई तू भूल गई है अपने जन्म-दाता को कि किन मुसीबतो का सामना करते हुए उसने तेरा पालन-पोषण किया था। तुझे दुलरा कर बडा करने के लिए तिल-तिल कर जली थी उसकी देह। तिल-तिल कर जली थी उसकी काया। तेज दुपहरो मे उसने हल चलाया था। स्वय भूखे रह कर उसने खेत मे बीज बोये थे। और अपना खून-पसीना देकर उसने बीजो को सीचा था। अगारे बरसाती हुई उन विदग्ध ज्वालाओ मे उसकी देह सीझ गई थी। सीझ गया था उसका प्राण और झुलस गई थी उसकी प्राणवन्त चेतना। तेरे लिए उसने कितने दुख उठाये ? कितनी तरह के दुख उठाये, उन्हे केवल दुख उठाने वाला किसान ही जानता है। अपने जीवन को मर-खपाते हुए उसने तुझे जीवन-दान दिया था। स्वय ने काटो और भुटो मे दिन बिताये, लेकिन तुझे उन शूलो से बचाते हुए फूलो के समान पाला और बडा किया। पर लिछमी, तेरी कृतघ्नता की भी कोई मिसाल नही है ! होश सँभालते ही तूने ठुकरा दिया अपने जीवनदाता को। पालन करने वाले पालनहार का साथ छोडते हुए तुझे एक पल भर की भी देर न हुई। गढ, कोट और बगलो मे जा चढी। बन-ठन कर। नखरे करती हुई। इठलाती हुई। जाने का कारण जानना चाहा तो उसके जवाब मे मिली एक कठोर प्रताडना ! एक निर्लज्ज मुस्कान ! तेरी निर्दयता से बस यह एक

ही प्रार्थना है कि इन तड़फते प्राणो को अधमरा छोड़ कर मत जा ! जाना ही है तुझे तो इन सिसकते प्राणो को एकदम समाप्त करके ही जा !

◇ ◇ दीप-मालाओ की जगमगाहट के भीतर तेरे हृदय की कालिमा साफ झलक रही है। हे लिछमी, तुझे कुछ भी शर्म-हया है तो अपनी चुन्दड़ी के एक ही झपेटे मे बुझा दे इन दीप-मालाओ को ! बुझा दे इस जग-मगाती कालिमा को ! तत्काल ही बुझा दे !

◇ ◇ यदि विधाता के कुशल हाथो ने तेरा सृजन किया है तो मजदूरो के मेहनती हाथो ने तेरा शृ गार किया। शृ गार के सारे उपक्रम—क्या रखडी, क्या बाजूबद, क्या तीमणिया और क्या गले का हार—यह सब-कुछ मजदूरो ने अपनी मेहनत से गढ कर तुझे पहिनाये है। तेरे हाथो पर लगी मेहदी की लालिमा, मजदूरो के खून की लालिमा है ! मजदूरो ने अपनी माँसपेशियो के साथ घिस-घिस कर ही इस लालिमा को यह रक्तिम रूप प्रदान किया है। फूलो से भी कोमल अपने बच्चो का मजदूर व किसानो ने तेरे चरणो मे बलिदान किया है। घर की बहू-बेटियाँ अपनी देह की लज्जा को ढाँपने के लिए कपडो तक को रोती-बिलखती रही पर श्रमजीवियो के मेहनती हाथो को तुझे ही सजाने से फुरसत नही मिली। घर-घर की जोत बुझा कर उन्होने केवल तेरी जोत को ही सदैव प्रज्वलित किया है। पर हे लिछमी, तेरी कृतघ्नता की तो कही कोई सीमा ही नही है ! इन सब एहसानो का तूने इस रूप मे वापिस बदला चुकाया कि ठीक दीवाली के दिन मन के सभी अरमानो को अपने पाँवो तले कुच-लती हुई धनवानो की हवेलियो मे जा चढी—ठुमके के साथ, नखरो के साथ—मनमर्जी के मटके करती हुई ! यदि तूने अपनी लज्जा को बेच डालने ही का फैसला किया है तो लगे हाथो उसका पूरा मोल भी चुकाती जा ! श्रमजीवियो के बलिदानो की एक-एक पाई अदा करनी होगी तुझे !

◇ ◇ दीप-मालाओं की जगमगाहट के भीतर तेरे हृदय की कालिमा साफ झलक रही है। हे लिछमी, तुझे कुछ भी शर्म-हया है तो अपनी चुंदडी के एक ही झपेटे में बुझा दे इन दीप-मालाओं को! बुझा दे इस जग-मगाती कालिमा को! तत्काल ही बुझा दे!

◇ ◇ किन्तु अब तेरी प्रवचना का अंत आ गया है। इतने दिनों तक तो भोले इंसानों की भलमन्साहत का नाजायज फायदा उठाकर उन्हें ठगती आ रही है। तेरे मदभरे रूप ने हमेशा उनके साथ छल किया है। पति की मेहनत पर गुलछर्रे उड़ाती थी, और गीत गाती थी भाई की कुशलता के। पर अब तेरी छलना का अंत आ गया है। यदि जाने का एक भी बोल जबान पर लाई तो जबान तेरी लोहे की गर्म-शलाख से दाग दी जायेगी। महलों की ओर यदि लालसा-भरी दृष्टि से ताकने का दुस्साहस किया तो उन ललचाई आँखों को ही फोड़ दिया जायेगा। शोरगुल की आवाज मचाकर यदि किसी को भी इमदाद के लिए पुकारने की कुचेष्टा की तो तुझे नागोरी गहनों [हथकड़ी और बेड़ी] से जकड़ दिया जायेगा। पूँजीपतियों के महलों की ओर तनिक-सा भी पाँव बढ़ाया तो तेरे उन पथभ्रष्ट पावों को ही काट डाला जायेगा। अब तेरी प्रवचना का अंत आ गया है। भूल जा अपनी पुरानी हरकतों को। भूल जा उन सपनों को जो महल, गढ़, कोट और बंगलों में देखे थे। अब उनके साथ तेरे सपने भी सारे समाप्त हुए।

◇ ◇ दीपमालाओं की जगमगाहट के भीतर तेरे हृदय की कालिमा साफ झलक रही है। अब उसे छिपाने की व्यर्थ चेष्टा न कर। यदि कुछ भी शर्म-हया है तो हे लिछमी! अपनी चुंदडी के एक झपेटे में बुझा दे इस जगमगाती कालिमा को। तत्काल ही बुझा दे।

जद तूटै अंबर सूं तारौ

बळती लूआ ढळै पसीनौ, आख्यां मे आधी रौ काजळ
पग उरवाणा तीखी सूळा, सूड करै काटा री काभळ
सुगना जोग लाज री चिंदी, डील उघाडौ नागी साथळ
पूठ तड़ातड झेलै विरखा, आभै चमकै वीज पळापळ
ठडी रैण पडै धर पाळौ, पाणत मे पाणतियौ जागै
पाकै पूख लोई री वूदा, अणमाप धान रौ ढिग लागै
पण लाटै मौत जीव रौ लाटौ, वैरण भूख रत्ती नी भागै
घणौ लाडलौ पूत मत्रायौ, घर रौ दीप बुझै घर आगै
कोई भरी ताल रै अेडै-छेडै
मरै मिनख रौ लाल दुलारौ।
जद तूटै अम्बर सू तारौ!

इज्जत मू हाय मिळै नी वानै, रोटी रा टुकडा खावण नै
जीवण री वाता है झूठी, जद किस्मत कै मर जावण नै
कोठै चढ वेटी सज वैठी, मा नीचै भाव वतावण नै
झाझर री झीणी झणकारा, वा लागी लाज लुकावण नै

घूमर रा घमकै घूघरिया, वा लागी मन विलमावण नै
टीकी रा फीका कू कू मे, वा लागी भाग सजावण नै
पात्रण नै चादी रा टुकडा, वा लागी नाचण - गावण नै
वा लागी प्रीत लुभावण नै, वा हसी बिना मुस्कावण नै

पइसा रौ पल्लौ धणी विछायौ
बाप वजायौ इकतारौ
जद तूटै अम्बर सूं तारौ !

◇ ◇ यह धूप और ये लूएँ—तेज, उत्तप्त, जलती हुई। यह किसान ही है जो इन लूओ को अपनी देह पर झेले जा रहा है। यह उसकी ही मेहनत है जो इन लूओ से जूँझ रही है। शरीर से उसके पसीना चू रहा है। मिट्टी की काया पर उसके माटी चिपक गई है। भाग्य पर मिट्टी ! यह मिट्टी उसकी आँखों का काजल है। सिर पर धूल। पाँवो के नीचे धूल—जलती हुई। जलती मिट्टी पर उसके नगे पाँव। नगे पाँवों के नीचे तीखी शूलें—काँटो का जाल। यह किसान है। ये किसान के हाथ है जो इन काँटों से जूँझ रहे है। यह किसान की मेहनत है और यह है किसान की देह — नगी। नगी देह पर यह फटी - पुरानी चिदी, शरीर को नही लज्जा को ढाँकने के लिए। यह लज्जा का शकुन है — नगी देह, नगा सीना, नगी पीठ, और नगे पाँव। ऐसा है यह किसान और ऐसी है उसकी मेहनत कि वह बिना रुके-थके काम किये जा रहा है। यह बरसात ओर ये पानी की बूंदे—ठडी, तीरो के समान। अपनी नगी पीठ पर वह इन ठडे तीरो को सहता चला जा रहा है। यह ठडी अधियारी रात, ये चमकती हुई विजलियाँ—मानो सारी पृथ्वी ही बर्फ के समान जम जायेगी। प्रकृति सारी जड होकर सो रही है पर इस जडता के बीच भी किसी की चेतना जग रही है। यह पाणतिया है—खेत मे पाणत कर रहा है। ये

ठठी रातें। ये अविचारी गाने। इस तरह खून की एक-एक बूंद से धान का एक-एक दाना पकता है। इस तरह धान के एक-एक दाने से धान का एक - एक पहाड - सा खडा होता है। लेकिन किसान के लिए तो खेतो मे हमेशा भूख उगा करती है—कभी न मिटने वाली भूख। कभी न बुझने वाली भूख। उधर धान के खलिहान कोई और लाट ले जाते है तो इधर स्वयं भूख से तडफती हुई मौत किसान की जिदगी के खलिहानो को लाट ले जाती है। किसान की मेहनत, किसान का धान, और किसान का लाडला इस धान के भरे खलिहान के बीच भूख से मर जाये। घर-घर मे प्रकाश की जोत जगमगाने वाले के घर का दीपक इस तरह घर के सामने बुझ जाये। इतनी मेहनत, इतना धान, और इतनी भूख। किसान का धान और किसान की भूख। किसान के लाडले बच्चो की भूख। धान का भरा खलिहान और उसी के पास भूख से तडफते बच्चे की लाश। यह अत्याचार और यह वेदना आकाश के तारो से नही सही जाती। वे टूट रहे है। इसी तरह एक - एक करके टूट रहे है।

◇ ◇ दुनिया मे न इस तरह के अत्याचारो की कोई सीमा है और न आकाश से इस तरह इस दु ख से टूटने वाले तारो की ही कोई सीमा है। किसान मेहनत करता है और भूखो मरता है। ऐसे भी इसान है इस दुनिया मे, जो मेहनत करना चाहते है और उन्हे मेहनत तक नसीब नही होती। शरीर बेच कर शरीर का पालन करते है। इज्जत बेच कर जिदगी खरीदते है। रोज देह की बिक्री और रोज देह का पालन। जीने के सारे बहाने झूठे है जब किस्मत हर पल, हर घडी मरने के लिए बाध्य करती है। इस तरह भयानक जिन्दगी बसर करने वालो की मौत भी न जाने कैसी भयानक होगी? देह की खरीद-बिक्री पर ये जिन्दगी के दॉव भी कितने भयानक है? सज - धज कर, बनाव - सिगार करके बेटी कोठे पर बैठी है। जवानी के खरीददारो को जवानी चाहिये। मॉ का अनुभवशील बुढापा नीचे बेटी के सौदर्य का भाव-ताव करने को मजबूर है। 'भूख' के पॉवो मे

झाँझर की झनकारे थिरक उठी है —झीनी , मधुर ! लाज रखने के लिए ही वह इस तरह अपनी लाज बेच रही है । 'भूख' के पाँव घूमर ले रहे हैं । घूघर घमक रहे है । वह अपने दुखियारे मन से लोगो का मन विलमा रही है । भाग्य की अमिट कालिमा को उसने टीकी के फीके कुकुम से सजाया है । 'दु ख' के पाँव लोगो के मन को खुशी पहुँचाने के लिए नाचने लगे है । 'भूख' का गला रोटी के टुकडो की खातिर , गाने के स्वरो मे मधुरता बेच रहा है । जनम की दुखियारी प्रीत का स्वाँग रचने को मजबूर हुई है । अपने क्रदन को छिपाने के लिए वह हँसी । दु ख से रिरियाते अधरो पर विवशता की हँसी ऐसी ही होती है— दु'ख की प्रतीक । स्मित मुस्कान-रहित । पत्नी के नाच पर मोहित , लोगो के सामने पति ने पैसो का पल्ला बिछा दिया है । वेटी के नाच पर बाप सगत करने बैठा है , हाथ मे इकतारा लिए । माँ नीचे भाव - ताव बतलाने को विवश है । यह अत्याचार और यह वेदना आकाश के तारो से नही सही जाती । वे टूट रहे है । इसी तरह एक-एक करके टूट रहे है । दुनिया मे न इस तरह के अत्याचारो की कोई सीमा है और न आकाश से इस तरह दु ख से टूटने वाले तारो की ही कोई सीमा है । अनगिनत दु ख और अनगिन टूटने वाले तारे । कब ये दु ख समाप्त होगे और कब इन तारो का इस तरह टूटना बद होगा ?



रोयां रुजगार मिळै कोनीं

घण मूघा मोती मत ढळका
रोया रुजगार मिळै कोनी
व्है लखपतियां रौ राज जठै
भूखां रौ पेट पळै कानी !

चारूमेर थे चकारा देना, भूखा नै बेकारा फिरलौ
रोटी रा टुकडा-टुकडा नै, बेमौत बिलखता ई मरलौ
पण गंगा-जमना रै जळ जितरौ, नैणा मे नीर नही भरलौ
धोरा री तिरसी धरती मे, आवै नी पिरथी-परळौ !
अै मैल्ल झुकै नी नींवा बिन
बाती बिन दीप वळै कोनी
घण मूघा मोती मत ढळका
रोया रुजगार मिळै कोनी !

व्है लखपतिया रौ राज जठै, भूखा रौ पेट पळै कोनी !

आख्या रै ऊडै समदर रा, मोत्या रो मोल घणौ सूवौ
इमरत नै मद रै प्याला सू, आसू रौ तोल घणौ मूघौ
सोना-चादी रा सिक्का सू, मैणत रौ कोल घणौ मूघौ
या लखपतिया री बोली सू, मजदूरी बोल घणौ मूघौ !

भिड जावण दो मैल - झूपडा
झगड़ै रौ जोग टळै कोनी
घणा मूघा मोती मत ढळका
रोया रुजगार मिळै कोनी !

व्है लखपतिया रौ राज जठै, भूखां रौ पेट पळै कोनी !

◇ यह लखपतियो का राज है। यहा बेकारी पलती है। भूख का पोपण होता है। यह लखपतियो का राज है। यहाँ भूख के लिए रोना व्यर्थ है। रोजी के लिए बिलखना व्यर्थ है। यह लखपतियो का राज है। रोने से रोजी नही मिलेगी। रोने से भूख नही मिटेगी। तुम भूखे हो इसीलिये तो ये लखपती है। फिर यह रोना किसलिए ? आखो के इन महगे मोतियो को व्यर्थ ढुलकना किसलिए ?

◇ ◇ यह लखपतियो का राज है। रोज सूरज उगेगा, रोज भूख बढेगी। रोज सूरज उगेगा, रोज बेकारी बढेगी। जितना रोओगे, उतनी भुखमरी बढेगी। जितना बिलखोगे, उतनी बेकारी बढेगी। फिर इस तरह निरुद्देश्य चक्कर मारते फिरने से कुछ भी हाथ नही लगेगा। भीख से भूख नही मिटेगी। रोटी के टुकडे-टुकडे के आगे हाथ पसारने से तुम अपनी जिन्दगी को इस तरह मौत के जबडे से बाहर नही निकाल सकोगे। फिर यह भटकना किसलिए ? यह रोना-बिलखना किसलिए ? न तुम्हारी

दोनों आँखो में गंगा-जमुना जितना अगाध पानी है और न धोरो की इस प्यासी धरती मे तुम अपने आँसुओ से प्रलय ही मचा सकते हो। बिना नींव को हिलाये ये महल नही झुकने के। बिना बत्ती के दीप नही जलने के। रोजी चाहते हो तो रोना छोडो।

◇ ◇ यह लखपतियो का राज है। यहाँ वेकारी पलती है। भूख का पोषण होता है। यह लखपतियो का राज है। यहाँ भूख के लिए रोना व्यर्थ है। रोजी के लिए बिलखना व्यर्थ है। यह लखपतियो का राज है। रोने से रोटी नही मिलेगी। रोने से भूख नही मिटेगी। तुम भूखे हो इसलिए तो ये लखपती है। फिर यह रोना किसलिए ? आँखो के इन महगे मोतियो को व्यर्थ ढुलकना किसलिए ?

◇ ◇ रोते हो और रोने की कीमत नही जानते। आँसू बहाते हो और आँसुओ का मोल नही जानते। आँखो के इस गहरे समदर के इन मोतियो का मोल बहुत महगा है। मद और अमृत के प्यालो से इन आँसुओं का तोल बहुत महगा है। रोते हो, रोने की कीमत नही जानते। आँसू बहाते हो और आँसुओ का मोल नही जानते। मेहनत करते हो और मेहनत का मूल्य नही जानते। सोने-चाँदी के इन सिक्को से बहुत महगी है तुम्हारी मेहनत। बहुत महगा है तुम्हारी मेहनत का कौल। इन लखपतियो से तुम मेहनत करने वाले कहीं श्रेष्ठ हो। और श्रेष्ठ है इन पूंजीपतियों के बचनो से तुम्हारे बोल। यह लखपतियो का राज है। रोने से रोजी नही मिलेगी। भिड जाने दो—इन महलो और झोपडियों को। यह योग नही टलने का। यह भिडन्त नही रुकने की। तुम भूखे हो इसीलिए तो ये लखपती हैं। ये लखपती है इसीलिए तो तुम भूखे हो।

◇ ◇ यह लखपतियो का राज है। यहाँ वेकारी पलती है। भूख का पोषण होता है। यह लखपतियों का राज है। यहाँ भूख के लिए रोना व्यर्थ है।

रोजी के लिए बिलखना व्यर्थ है। यह लखपतियो का राज है। रोने से रोजी नही मिलेगी। रोने से भूख नही मिटेगी। फिर यह रोना किस-लिए ? आँखो के इन महगे मोतियो को व्यर्थ ढुलकाना किसलिए ?



माटी रा रंगरेज

खेत बण्या रणखेत, खेजड़ी ऊपर धजा फरूकै
धोरा ऊपर वध्या मोरचा, ऊभी फौज उडीकै
हेलौ देवा जितरी जेज
म्है हा माटी रा रगरेज
धरती ज्यू चावा ज्यू रग दा ।

अन - दाता विच रैयौ म्हारै जनम-जनम रौ वैर
पण करडी माटी चीर काळजौ, करदा लीली चैर
भात - भात रा फूल जमी मे, वेलडिया मिस छापां
जिण दिन रग दा अमर चूनडी, कोड न करता धापा।
जग रौ आज विगड़्यौ ढग
नड़ी - नडी मे नाचै जग
मन मे इतरौ अजै गुमेज
हेलौ देवा जितरी जेज
म्है हां माटी रा रगरेज
धरती ज्यू चावा ज्यू रग दा ।

खेत - खेत रै आडी खाई, जठै फौज रा डेरा
गळियौ रंग कसूंबौ गैरौ, भरिया सरवर बेरा
वाचै विडद अरट री पनड़ी, भूण गिड़गिड़ी गाजै
गोफण रा सरणाटा आगै, तोप बदूंका लाजै !

सूड करतां वाढा मूळ
जड़िया हेना ठूठा - ठूळ

फूल समझनै पग मत धरजौ आ कांटा री सेज !
म्है हां माटी रा रंगरेज
हेलौ देवां जितरी जेज
धरती ज्यूं चावा ज्यूं रंग दां !

मिटां मुलक रै काज मुळकता, प्रीत पुराणी पाळां
हाथां पाणी लियौ, कदेई म्है कांचौ रंग न गाळां
मन में इतरौ अजै गुमेज,
म्हाने वणौ मौत सूं हेज !

मरदां नै मोसा मत दीजौ, मरता करां न जेज !
म्है हां माटी रा रंगरेज
हेलौ देवां जितरी जेज
धरती ज्यूं चावा ज्यूं रंग दां !

◈ बरसो से खेती करने वाले खेत अब हमारे रण - क्षेत्र बन गये है। पानी के बदले अब उनमे खून बहेगा। वह देखो—खेजडी पर फरफराती हुई रण - ध्वजा! धोरे-धोरे पर मोरचे तन गये है। बरसो से खेती करने वाले खेतो मे अब जुद्ध होगा। पानी के बदले अब उनमे खून बहेगा। फौज की भुजाएँ फडफडा रही है। वह अब और प्रतीक्षा नही कर सकती। केवल एक आवाज की देर है। हम चाहे तो धरती को खून से रग दे। चाहे तो धरती को हरियाली से रग दे। हम तो माटी को रगने वाले रगरेज है। जैसा मन करे वैसा माटी को रग दे।

◈ ◈ सारी दुनिया भर का धान हम ही पैदा करते है और हमारे ही दॉत उस धान के लिए तरसते रहे है। जनम - जनम से तरसते रहे है। पर फिर भी हमने धान निपजाने से कभी किनारा नही किया। अपनी जी - तोड मेहनत से हमने करडी धरती की करडी छाती को चीर कर उसे हमेशा हरा - भरा रखा है। दु ख से जूझते हुए हमने हमेशा दुनिया के लिए सुखद हरियाली का हरा समदर लहराया है। हम माटी के रगरेज जो है। धरती को हरा रगते है। भॉत-भॉत के उसमे फूल छापते है। बेलो के मिस रग-बिरगे फूल उस पर कोरते है। जब जी चाहेगा तो अमर चूदडी भी रग देगे। उस दिन ही हमारे मन की आस पूरण होगी। अब हम वह अमर चूदडी रगने वाले ही है। हम ही दुनिया भर का धान पैदा करे और हमारी ही आते दाने-दाने को तरसती रहे। हमारी ही गफलत से दुनिया का इस प्रकार ढग बिगड गया है। लेकिन अब गफलत नही होगी। हम बदल कर रहेगे, पुरानी दुनिया का यह पुराना ढग। हमारी नाडी-

नाडी मे जुद्ध का जोश उबल रहा है। सदियो से दबते आ रहे है पर आज भी मन मे इतना गर्व उफन रहा है कि एक आवाज देने की देर है। हम तो माटी को रगने वाले ही रगरेज है। चाहे तो धरती को हरियाली से रग दे। चाहे तो खून से रग दे। जैसा मन करे वैसा माटी को रग दे।

◈ ◈ बरसो से खेती करने वाले खेतो मे अब युद्ध होगा। पानी के बदले अब उनमे खून बहेगा। धोरे धोरे पर हमारे मोर्चे तन गये है। हर खेत की हर माठ पर गहरी खाई खुद गई है वही हमारी फौज के सिपाहियो ने डेरे डाले है। युद्ध की तैयारी के लिए हमने अफीम घोल रखा है—तालावो मे, कुओ मे। प्रकृति का कण कण आज हमे युद्ध का नशा दे रहा है। खडद खडद आवाज करती हुई यह अरट की पनड़ी हमारी विरुदावली बाच रही है। कुए पर बधी भूण -गिड-गिडियो की निरतर गर्जना दुश्मनो के हिये को कपा रही है। दुश्मनो के पास तोपे है, बदूके है लेकिन हम उन्हे गोफणो से ही निपट लेगे। गोफण से छूटे हुए पत्थरो की सनसनाती आवाजो के सामने ये तोप बदूके, है किस गिनती मे। हम कोई भी काम अधूरा नही करते। सूड करते है तो कटीली झाडियो को निर्मूल नष्ट कर डालते है। झाड - झखाडो को जडो सहित काट डालते है। दुश्मन से लडेगे तो उसे भी निर्मूल नष्ट कर डालेगे। अब तक सहते चले आये है किन्तु अब नही सहेगे। फूल के बहाने आगे बढने की धृष्टता न करना, यह जहरीले काटो की जहरीली सेज है। पग धरा नही और मरे नही। केवल एक इशारे की देर है। हम माटी को रगने वाले रग-रेज ही तो है। जैसा चाहे वैसा माटी को रग दे।

०० मुल्क के लिए हम किसी भी क्षण मरने को तैयार हैं। केवल उसी की प्रीत का लिहाज है पर अब और सहने से देश की बर्बादी होगी। बरसों से खेती करने वाले खेतों में अब जुद्ध होगा। पानी के बदले अब उनमें खून बहेगा। खून—पक्का खून! कसम ही ले रखी है हमने कि न तो कभी कोई कच्चा काम ही करेंगे—और न अपने हाथों से कभी कच्ची रंगाई ही। बरसों से दबे चले आ रहे हैं फिर भी मन में इतना गर्व है कि हमें मौत से बड़ा मोह है। मर्दों को ताना देने का दुस्साहस न करना, हमें मरने का भय हर्गिज नहीं है। मौत हमारे पीछे नहीं आती, हम मौत के सामने आगे बढ़ते हैं। केवल एक इशारे की देर है, एक आवाज की देर! हम रंगरेज हैं, माटी को रंगने वाले। जैसा मन करे वैसा माटी को रंग दें। चाहें तो खून से रंग दें। हरियाली से रंग दें। बरसों से खेती करने वाले खेतों में अब युद्ध होगा। पानी के बदले अब उनमें खून बहेगा!



उछाळौ

सज्जौ अेक सघट्टण, पथ पलट्टण, राज उल्टट्टण आज वढौ
मन मे मिनखापण नैण सुरापण, खाधं खापण मेल कढौ
तपै अम्बर भाण धरा किरसाण, पसीनै रै पाण ज पाकत खेती
पण मूंछा रै ताण किया करडाण, विना घमसाण कोई लाट न खेती।

ढाणी रे ढाणी अखडी व्हे उच्छव, गाळ कसूबौ रे ढोल ढमक्कै
डकै री चोट त्रवाळ ध्रमक्कै, धरती रा किरसाण धनक्कै
सज्जौ अेक सघट्टण पथ पलट्टण, राज उलट्टण आज वढौ
मन मे मिनखापण नेंग मुरापण, खाधै खापण मेल कढौ।

जाणै कहरी गेह सू आज कढचौ, जाणै मेह प्रचंड तूफान चढचौ
जाणै बीज पळापळ मेह चढचौ, जाणै तीड धरातल घेर चढचौ
जाणै पछि झपट्टण वाज चढचौ, जाणै बीज कडक्कन गाज चढचौ
सज्जौ अेक सघट्टण, पथ पलट्टण, राज उलट्टण आज वढौ!
मन मे मिनखापण नेण सुरापण, खाधै खापण मेल कढौ।

◊ खेत पर अधिकार जताने के लिए खेत के किसान को मरने के लिए ही नहीं, मारने के लिए भी तैयार हो जाना है। अब तक चलती आई सभी रूढियों को एकदम से उलट कर रख दो। अन्याय और अत्याचार

के सारे रास्ते ही पलट दो। उलट दो तुम्हारे शोषण पर टिके हुए इस राज्य को। एक दम से उलट दो। संगठित होकर आगे बढो। राज-पथ बदलना है, आगे बढो। शासन उलटना है, आगे बढो। मन मे इंसानियत आंखो मे शौर्य और कंधे पर कफन लेकर आगे बढो। संसार मे केवल दो ही चीजे तपने वाली है। आकाश मे सूर्य और धरती पर किसान। सूरज के तपने से प्रकाश होता है, चेतना पनपती है। किसान के तपने से खेती पकती है, धान निपजता है। प्रकाश के लिए सूरज को जलना पडता है। खेती के लिए किसान को मरना पडता है। सूरज जलता है तो प्रकाश पर अधिकार भी उसी का है। लेकिन किसान खेती के लिए जान खपाता है पर धान पर उसका अधिकार नही। किन्तु अब खेत पर अधिकार जताने के लिए खेत के किसान को मरने के लिए ही नही, मारने के लिए भी तैयार हो जाना है। खून से पैदा की हुई खेती को अब कोई मूँछे तान कर ही लाट नही सकता। खून से पैदा की हुई खेती को अब कोई 'करडाण' करके लाट नही सकता। खून से पैदा की हुई खेती को अब कोई बिना खून दिये लूट ले जाय, यह नामुमकिन है।

◇◇ तुम्हारे लिए यह तो मरण-त्यौहार है। खूब खुशियाँ मनाओ। खूब बाजे बजाओ। ढाणी-ढाणी मे अखंड उच्छव हो। युद्ध की तैयारी मे खूब अफीम गले। ढोल बजे। त्रबाल्र द्रमके। तुम्हारे लिए तो यह मरण त्यौहार है। बढो — धरती के किसानो, डके की चोट आगे बढो? निर्भय, निःशंक होकर आगे बढो।

◇◇ संगठित होकर आगे बढो। राज-पथ बदलता है—आगे बढो। शासन उलटना है — आगे बढो। बदल दो — अत्याचार और अन्याय के सारे रास्तो ही को बदल दो। उलट दो — तुम्हारे शोषण पर टिके हुए इस राज्य को ही उलट दो। मन मे इंसानियत, आंखो मे शौर्य और कंधे

पर कफन लेकर आगे बढो ।

◈ ◈ इस तरह आगे बढो जैसे सिह अपनी गुफा से झपट कर वाहर निकला हो । दुश्मन पर इस तरह बरस पडो जैसे प्रचड तूफान पर चढा हुआ मेह बरसता है । और वरसात मे जैसे बिजलियाँ अविराम चमकती है, वैसे ही भभक पडो इन लुटेरो पर । खेत पर जिस प्रकार टिड्डी दल चारो ओर से घेर कर टूट पडता है — उसी प्रकार टूट पडो इन पीढियो के दुश्मनो पर । झपट पडो — जैसे कि पक्षी पर कोई बाज झपटा हो । टूट पडो—जैसे कि कडकडाती हुई बिजली ही टूट पडी हो ।

◈ ◈ सगठित होकर आगे बढो । राज-पथ बदलना है—आगे बढो । शासन उलटना है — आगे बढो । बदल दो — अत्याचार और अन्याय के सारे रास्तो ही को बदल दो । उलट दो — तुम्हारे शोषण पर टिके हुए इस राज्य को ही उलट दो । मन मे इसानियत, आँखो मे शौर्य और कधे पर कफन लेकर आगे बढो ।



आठौ काळ

आभै ऊपर भमै गिरजडा , चीला उडती जाय
पग-पग ऊपर ल्हास मिनख री , कुता माटी खाय
लूट , डकैती , खून , चोरिया , लाय लगी तौ झाळोझाळ
भूख भचीडा फिरै खावती , नाचै झूमै सौ-सौ ताळ
सुगनचिड़ी सूरज नै पूछ्यौ , गिरजा नै पूछ्यौ ककाळ
धोरा नै पूछै रूखड़ला , ल्हासा नै अगनी री झाळ
क्यू मौत री मरजी माथै, जीवण री पड़गी हड़ताळ ?
हिरणी बोली रया करै कई, रखवाळा रौ पडग्यौ काळ !

जेठ , असाढा आधी वाजी , खीरा तपियौ तावडियौ
बाळी लूआ हिये रमाई , रैण रेत रो गावडियौ
पग उरवाणा , बळी चामडी , वळ-वळ हुयग्यौ छाळौ
इण आस मे सांसा अटक्या , आवैला बरसाळौ
आंखड़िया पथराई , वचगी पांणी आडी पाळ
धोरां नै पूछै रूखडला , ल्हासा नै अगनी री झाळ
क्यू मौत री मरजी माथै , जीवण री पडगी हड़ताळ ?

हिरणी बोली रया करै कई, रखवाळा गै पड़ग्यौ काळ !

सदा सुहाणौ ल्हूवै सावण, दिन आवै अलबेला
मिनख ममोलचा बाड़ बेल्डी, करै मना रा मेळा
प्रीत बावळी हुयनै धरती, आप मैं नहीं मावै
पण बिरखा बैरण अंडी रूठी, पीड़ कही नीं जावै
सपनै मे हरियै सावण रा, आवै है जंजाळ
सुगनचिड़ी सूरज नै पूछ्यौ, गिरजा नै पूछ्यौ कंकाळ
क्यू मौत री मरजी माथै, जीवण री पड़गी हड़ताळ ?
हिरणी बोली रया करै कई, रखवाळा गै पड़ग्यौ काळ !

धरती नै बैराग सूझियौ, घर-घर जड़ग्या ताळा
काळ भूमतौ रमै आगणै, भूत बण्या रखवाळा
मिनख मारणौ, खोस खावणौ, चोरी हुदा रहग्या काम
रोटी मोटौ तीरथ हुयग्यौ, गगा जमना तीनू धाम
काळ बरस मे भूखा धाया, हुयग्या अेकण ढाळ
धोरा नै पूछै रूखडला, ल्हासा नै अगनी री झाळ
क्यू मौत री मरजी माथै, जीवण री पडगी हडताळ ?
हिरणी बोली रया करै कंई, रखवाळा गै पडग्यौ काळ !

इतरा दिन तौ चांद लागतौ, चद्रमुखी रा मुखडा ज्यू
आज भूख रै कारण फीकौ, लागै रोटी टुकड़ा ज्यू

भूखी बिलखी आंखड़िया में, भूखमौ कदै न छाजै
नैण कवळ री उपमा देता, हुयी फूल री लीजै
देख गिगन रौ आधौ चंदा, मगता हाथ पसारै
हिम्मत करनै दौड़ण लागी, भूख मौत रै लारै
धरती ऊपर धरणौ दीनौ, आवेटै मे थमती चाल
सुगनचिड़ी सूरज नै पूछ्यौ, गिरजा नै पूछ्यौ ककाळ
क्यू मौत री मरजी माथै, जीवण री पड़गी हड़ताल ?
हिरणी बोली रया करै कई, रखवाळा रौ पड़ग्यौ काळ !

घर छूटा घरबार छूटग्या, आस छूटगी जीवण री
कायौ हुयनै जैर घोळियौ, हिम्मत कीनी पीवण री
मिनखा तन नै मिटती वेळा, जीत जैर मे दीसी
फांसी चढता फदौ बोल्यौ, मत गिण मौत इतीसी
कूदण लागौ मिनख कुवा मे, बोल उठी परछाई
ऊडौ खाडौ भरणी चावै, पेट भरै नी काई
भवळ खायनै पड़गी काया, आख्या मे आयौ जजाळ
धोरा नै पूछै रूखड़ला, ल्हासा नै अगनी री भाळ
क्यू मौत री मरजी माथै, जीवण री पड़गी हड़ताळ ?
हिरणी बोली रया करै कई, रखवाळा रौ पड़ग्यौ काळ !

पाणी पी-पी जापौ काढ्यौ, हियै दूध री सूखी धार
टाबर रोयौ भूखा मरतौ, मन बिलमावण लागी नार

बेटो मा नै ढोसी जाणै , चीसां कर - कर रोवै
खाली बोबो चूंघै कद तक , सबर कठा तक होवै
रीसा बळनौ किरड़ खायगौ, नैनौ रूप कियौ विकराळ
मा हालरियौ गाती रैगी, होठ लोई सू होयग्या लाल
ममता बोली सोच करै क्यू , खून व्रथा नहि जावैला
होंटा चस्कौ मूडौ लागौ, रुळौ राज गिट जावैला
खून दूध सू मीठौ लागै , हसतौ - हसतौ पीग्यौ बाळ
मुगनचिड़ी सूरज नै पूछ्यौ, गिरजां नै पूछ्यौ कंकाळ
क्यू मौत री मरजी माथै , जीवण री पड़गी हड़ताळ ?
हिरणी बोली रया करै कई, रखवाळा रौ पड़ग्यौ काळ

कद सू देख काळ धरा रौ , आभौ इतरौ आगौ
पण अणचेता नै समय कठै के देखै काळ अभागौ
उगतौ ढळतौ सूरज देखै , माणस तडफा तोडै
प्रीत तूटती देखै चदा , छैल कांमणी छोडै
मरतौ हिचकी लेवै टाबर, तूटै नभ मे तारौ
बेचे रमणी लाज , चानणौ कम पडग्यौ चदा रौ
मुगनचिड़ी सूरज नै पूछ्यौ , गिरजा नै पूछ्यौ ककाळ
धोरा नै पूछै रूखड़ला , व्हामां नै अगनी री झाळ
क्य मौत री मरजी माथै, जीवण री पड़गी हड़ताळ ?

हिरणी बोल्यां रया करै कई, रखवाळां रौ पड्यौ काळ !
रखवाळा रौ पड़्यौ काळ, रखवाळा रौ पड़्यौ काळ !

◇ ○ यह आकाश है और यह धरती। आकाश में पक्षी मडरा रहे है। धरती पर मनुष्यों की लाशे बिछी पडी है। आकाश मे अनगिनत गिद्ध चक्कर काट रहे है। बेशुमार चीले उड रही है। नीचे कदम-कदम पर मनुष्य मरा पडा है। मनुष्य की माटी को कुत्ते खा रहे है। यह मौत नही, यह भूख है। कई रूप और कई नाम है इसके—लूट, डकैती, खून और चोरी। सर्वत्र भूख और सर्वत्र आग। भूख की आग और भूख की लपटे। फिर भी भूख की भूख नही अघाती। भूख के मारे वह भी भचीडे खाती घूम रही है। इसे मौत चाहिये। मनुष्य की लाश के रूप मे इसे जहा कही भी मौत मिल जाती है, इसकी खुशी का पार नही रहता। सौ-सौ हाथ नाचती है। सौ-सौ ताल झूमती है। मनुष्य की इस दुर्गति से प्रकृति स्वय स्तम्भित हो गई है। उसकी चेतना के हर पहलू मे केवल यह एक ही प्रश्न प्राणवन्त हो उठा है—यह सब क्या हो गया? यह सब कैसे हो गया? सुगनचिडी सूरज से पूछ रही है, ककाल गिद्धो से पूछ रहे है, वृक्ष धोरो से पूछ रहे है और स्वय अग्नि की लपटे जलती हुई लाशो से पूछ रही है—आखिर यह सब कैसे सभव हुआ? यह जिन्दगी मौत की मर्जी पर क्यो इस तरह निष्प्राण और निष्क्रिय हुई जा रही है? क्यो? क्यो? हिरनी ने उत्तर दिया—समाज के रखवालो ही का जब पानी मर गया तो इसके लिए रैयत का क्या दोष? प्रकृति का क्या दोष? यह तो रखवालो की नीयत का काल है। उनकी निष्ठा का काल है।

◇ ◈ वरसात की आशा से सभी तरह की विपदाओ को सिर - आखो पर झेला । जेठ और आषाढ के दिनो मे वेशुमार आधिया चली । और गर्मी ऐसी पडी मानो अगारे ही वरसे हो । स्नेहमयी लूओ को हृदय मे रमाया , इसी आशा से कि वरसात होगी । रेत को आखो का ओखद मान कर सहन किया । वह अगारे बरसाने वाली गर्मी और वे नगे पाव । पैरो की चमडी जल गई । जल - जल कर छाले हो गये । छाले शरीर पर, छाले पैरो मे और छाले हृदय मे । मरने मे कुछ भी कोर - कसर वाकी न थी । केवल बरसात की आशा मे सास अटके थे । पर आखे उसकी बाट निहारते - निहारते पथरा गई । न वरसात हुई और न सास ही निकला । पाल बाध कर जैसे किसी ने आकाश के पानी को ही रोक दिया हो । उधर आकाश मे पानी रुका और उधर धरती पर किसानो की जिन्दगी ही रुक गई । वृक्ष धोरो से पूछ रहे है और स्वय अग्नि की लपटे जलती लागो से पूछ रही है—आखिर यह सब कैसे सभव हुआ ? यह जिन्दगी मौत की मर्जी पर क्यो इस तरह निष्प्राण और निष्क्रिय हुई जा रही है ? क्यो ? क्यो ? हिरनी ने उत्तर दिया—समाज के रखवालो ही का जब पानी मर गया तो इसके लिए रैयत का क्या दोष ! प्रकृति का क्या दोष ! यह तो रखवालो की नीयत का काल है । उनकी निष्ठा का काल है ।

◇ ◈ सावन की हरियाली किसान के मन को हरियाला बना देती है । अलबेली घडिया । अलबेले दिन । मनुष्य और मवेशी सावन की खुशी मे नहा उठते है । वाड और बेलडिया हरियाली मे छा जाती है । प्रीत मे वाली धरती अपने आगे मे नही समाती । पर आज वही सावन है , वही धरती और

यहाँ किसान। विग्रहा वैरण ऐसी रूठी कि हृदय की पीड़ा का बयान नहीं किया जा सकता। अब सावन और सावन की हरियाली सपनों का जंजाल बन गई है। सुगनचिड़ी सूरज से पूछ रही है और कंकाल गिद्धों से पूछ रहे हैं कि यह जिन्दगी मौत की मर्जी पर क्यों इस तरह निष्प्राण और निष्क्रिय हुई जा रही है ? हिरनी ने उत्तर दिया—समाज के रखवालों ही का जब पानी मर गया तो इसके लिये रैयत का क्या दोष। प्रकृति का क्या दोष ! यह तो रखवालों की नीयत का काल है। उनकी निष्ठा का काल है।

◇ ◇ सावन - भादों में जीवन लहराने वाली धरती ने समस्त जीवधारियों से नेह - नाता तोड़ कर वैराग धारण कर लिया है। जिन्दगी की खुशियों में झूलने वाले घरों में ताले पड़ गये हैं। कब्रों के समान सूने आंगन में अब मौत झूम रही है। और भूत रखवाले बने घूम रहे हैं। अराजकता ने सर्वत्र अपना राज कायम कर लिया है। पेट के लिए चोरी, लूट, छीना - झपटी और मनुष्यों को मारना रोज - मर्रा के काम हो गये हैं। रोटी—जमना, रोटी—गंगा। तीनों धाम है यह रोटी। मनुष्य के लिए आज सबसे बड़ा तीरथ बन गई है यह रोटी। ऐसा ही है यह भयंकर अकाल। भूखे और धाये सब एक - मेल। वृक्ष धोरों से पूछ रहे हैं और स्वयं अग्नि की लपटें जलती हुई लाशों से पूछ रही है—आखिर यह सब कैसे संभव हुआ ? यह जिन्दगी क्यों इस तरह निष्प्राण और निष्क्रिय हुई जा रही है ? हिरनी ने उत्तर दिया—समाज के रखवालों ही का जब पानी मर गया तो इसके लिए रैयत का क्या दोष ! प्रकृति का क्या दोष ! यह तो रखवालों की नीयत का काल है। उनकी निष्ठा का काल है।

◈ ◈ प्रकृति के विभिन्न रूपो मे सौंदर्य के परम्परागत उपादान आज भूख और मौत के प्रतीक बन गये है। इतने दिनो तक तो नारी के सुन्दर मुखडे मे चाद की प्रतिच्छवि दिखलाई पडती थी और चाद मे नारी के सुन्दर मुखडे का प्रतिबिंब झलक उठता था, पर आज उसका सौंदर्य सर्वथा फीका नजर आ रहा है। भूखी आखे केवल उसमे रोटी का ही सादृश्य पा रही है। सुन्दर आखे सौंदर्य निहारा करती थी। भूखी आखे सर्वत्र भूख का समाधान खोज रही है। भूख से अजित इन आखो मे सुरमे का अजन क्या कभी शोभा पा सकता है? भूख से पीडित इन आखो को कमल की उपमा देना स्वय आखों का उपहास करना है। कमल के स्मित सौंदर्य को लज्जित करना है। नील गगन मे स्थित बाका चाद रोटी के टुकडे का भ्रम पैदा कर रहा है। भिखारियो की भूखी चितवन गगन की इस बाकी रोटी के लिए भी अपने भूखे हाथ पसार रही है। भूख के लिए क्या जिन्दगी और क्या मौत। मौत को सामने देखा तो वह मौत के पीछे ही भागी। आगे मौत और पीछे भूख। ठेट धरती पर आकर मौत ने विश्राम लिया। आधेटे मे आकर ही उसकी चाल थम गई। सुगनचिडी सूरज से पूछ रही है और कंकाल गिद्धो से पूछ रहे है कि यह जिन्दगी मौत की मर्जी पर क्यो इस तरह निष्प्राण और निष्क्रिय हुई जा रही है? हिरनी ने उत्तर दिया — समाज के रखवालों ही का जब पानी मर गया तो इसके लिए बरसात का क्या दोष! रैयत का भी क्या दोष! यह तो रखवालो की नीयत का काल है। उनकी निष्ठा का काल है।

◈ ◈ भूख की मार से घर छूटे, घरबार छूट गये और छूट

गई जीने की सभूची आशाए भी, पर नही छूटा एक मौत और भूख का पीछा—निरतर पीछा। इस तरह की जिन्दगी से तग आकर जहर का आसरा लिया। धान नही तो जहर ही सही। मौत को अपने हाथो से निगलने की चेष्टा की। लेकिन मनुष्य की जिन्दगी इस विपदा के समय भी जहर मे मुस्करा उठी। जिन्दगी ने मौत पर विजय पाई। पर मौत के एक नही सैकडो बहाने है। जहर नही तो फासी ही सही। लेकिन गले के फन्दे ने जिन्दगी को फिर सचेत किया—मौत को इतना आसान न मानो। यह स्वेच्छा से अपनाने लायक चीज नही है। पर मौत के एक नही हजारो बहाने है। फासी का फदा भी हाथ नही लगता तो कुआ ही सही। लेकिन गिरते हुए मनुष्य की परछाई ने मनुष्य की जिन्दगी को फिर सावधान किया—पगले! तू इतने गहरे खड्डे को भरने के लिए तैयार हो गया तो अपने ही पेट का यह छोटा-सा गड्ढा भरने मे तेरे हौसले पस्त क्यो हो गये? मौत और जिन्दगी की इस दुविधा से मानव-देह चक्कर खाकर गिर पडी। आखो मे जजाल मडराने लगे। इन भयावने दृश्यो से विस्मित होकर वृक्ष थोगो से पूछ रहे है और स्वय अग्नि की लपटे जलती हुई लाशो से पूछ रही है कि आखिर यह जिन्दगी मौत की मर्जी पर क्यो इस तरह निष्प्राण और निष्क्रिय हुई जा रही है? क्यो? क्यो? हिरनी ने उत्तर दिया—समाज के रखवालो ही का जब पानी मर गया तो इसके लिए बरसात का क्या दोष! रैयत का क्या दोष! यह तो रखवालो की नीयत का काल है। उनकी निष्ठा का काल है।

◇ ◇ नये इसान के जन्म पर मा ने पानी के घूट पी-पी कर जापा बिताया। भूख और प्रसव की वेदना ने मा के ममता-

भरे आचलो का दूध आचलो मे ही सुखा दिया । बच्चा भूख के मारे कराहने लगा और मा की विवशता बच्चे का मन बिलमाने लगी । मा अपने बच्चे का मन विलमा सकती है पर बच्चे की भूख नही । अवोध बालक मा को दोषी जान कर जोर-जोर से रोने लगा । सूखे आचल को यह कब तक चूसता रहे । बिना दूध के आखिर वह कब तक सब्र करता रहे । बालक ने विकराल रूप धारण किया और गुस्से मे आकर उसने किरड खाया अपनी मा के स्तनो ही को । मा का दुलार लोरी गाता रहा और उधर बच्चे के होठ खून से रग कर लाल हो गय । दूध नही, खून ही सही । मा की ममता बीच ही में बोल पडी—चिता करने की कोई बात नही । यह खून व्यर्थ नही जायेगा । बच्चा मा के दूध तक को नही लजाता फिर उसका खून कैसे लजायेगा । दूध के बदले में उसके होठो पर जो यह खून का वस्का लगा है वह अवश्य रग लायेगा । इस बिगडे हुए राज्य को वह निगल कर रहेगा । बच्चे को दूध से भी मीठा लगा यह खून ! वह उसे हसता-हसता पी गया । नही-नही, यह खून हर्गिज व्यर्थ नही जायेगा । यह इस खूनी राज्य का खून करके रहेगा । सुगन-चिडी सूरज से पूछ रही है और कक्काल गिद्धो से पूछ रहे हैं कि यह जिन्दगी मौत की मर्जी पर क्यो इस तरह निष्प्राण और निष्क्रिय हुई जा रही है ? हिरनी ने उत्तर दिया — समाज के रखवालो ही का जब पानी मर गया तो इसके लिए रैयत का क्या दोष । यह तो रखवालो की नीयत का काल है । यह तो उनकी निष्ठा का काल है ।

〃 ८ धरती पर ताडव नृत्य करते हुए इस अकाल और इस अकाल की विभीषिका को आकाश की नीलिमा तक इतनी

दूरी से साफ देख रही है, पर चेतना-शून्य रखवालो को इतना समय ही कहा है जो अकाल को एक पल निहार सके। उगता-ढलता सूरज देख रहा है कि भूख से तडफती लाशे किस तरह प्राण तोड रही है। चद्रमा भी अपने धूमिल आकाश से भूख के कारण बिछुडते हुए दम्पत्ति की विवशता को देख रहा है। भूख के आघात से टूटते हुए प्रेम को देख रहा है। भूख से रिरियाता बच्चा मरते समय आखिरी हिचकी लेता है। उसके दर्द से आकाश मे, इतनी दूरी से टिमटिमाता तारा टूट कर बिखर जाता है। भूख का पेट भरने के लिए नारी अपना शरीर बेच रही है, शरीर की लाज बेच रही है, और विडम्बना के इस सौदे को देख कर चद्रमा की चादनी तक फीकी पड़ जाती है। पर सत्ता के मद मे बेहोश रखवालो को कही कुछ भी दिखाई नही पडता — न अकाल और न अकाल की विभीषिका ही। मनुष्य की इस दुर्गति मे स्वय प्रकृति स्तम्भित हो गई है। सुगनचिडी सूरज से पूछ रही है, कंकाल गिद्धो से पूछ रहे है, वृक्ष धोरो से पूछ रहे है और स्वय अग्नि की लपटे जलती हुई लाशो से पूछ रही है — आखिर यह सब कैसे सभव हुआ? यह जिन्दगी मौत की मर्जी पर क्यो इस तरह निष्प्राण और निष्क्रिय हुई जा रही है? क्यो? क्यो? हिरनी ने उत्तर दिया — समाज के रखवालो ही का जब पानी मर गया तो इसके लिए थैल का क्या दोष! प्रकृति का क्या दोष! यह तो रखवालो की नीयत का काल है। उनकी निष्ठा का काल है।

विरखा - बींनणी

लूम-झूम मदमाती, मन विलमाती, सौ वळखाती,
गीत प्रीत रा गाती, हसती आवै विरखा बीनणी।

चौमासै मे चवरी चढनैं, सांवण पूगी सासरै
भरै भादवै ढळी जवानी, आधी रैगी आसरै
मन रौ भेद लुकाती, नैणां आसूडा ढळकाती
रिमझिम आवै विरखा बीनणी।

ठुमक - ठुमक पग धरती, नखरौ करती
हिवडौ हरती, बींद - पगलिया भरती
छम - छम आवै बिरखा बीनणी।

तीतर वरणी चूंदडी नै काजळिया री कोर
प्रेम डोर मे बधती आवै रूपाळी गिणगोर
झूठी प्रीत जताती, झीणै घूंघट मे सरमाती
ठगती आवै विरखा बीनणी।

घिर-घिर घूमर रमती, रुकती थमती
बीज चमकती, भव-भव पळका करती
भवनी आवै विरखा बीनणी।

आ परदेसण पावणी जी, पुळ देखै नी वेळा
आलीजा रै आगणे में करै मना रा मेळा
झिरमिर गीत सुणाती, भोळै मनडै नै भरमाती
छळनी आवै विरखा बीनणी।

लूम-झूम मदमाती, मन विलमाती
सौ बळ खाती, गीत प्रीत रा गाती
हँसती आवै विरखा बीनणी।

○ प्रेम-भरे गीतों की गर्जन-तर्जन के साथ विरखा-बीनणी आ रही है मुस्कराती हुई। लूम-झूमकर मस्तानी चाल से मन विलमाती हुई, सौ-सौ बल खाती हुई, प्रेम के सुरीले गीत गाती हुई, यह वर्षा-दुलहिन आ रही है।

○ ○ यह वर्षा-दुलहिन चौमासे में चवरी पर चढी, भरपूर गाजे-बाजों के साथ। सजधज कर। हरे-भरे सावन मे यह ससुराल पहुची। भरिये भादरवे मे ही इसकी जवानी ढल गई। आशा-अभिलाषाओं को नि शेष करती हुई, मन के भरम को छिपाती हुई, नयनो मे आसू छलकाती हुई, यह वर्षा-दुलहिन आ रही है।

◈ ◇ यह बिरखा बीनणी आ रही है, छम-छम पैंजनिया बजाती हुई, धीरे-धीरे ठुमक-ठुमक कर, बनाव-सिंगार व नखरो के साथ। बींद-पगलिया भर कर जी को हरा-भरा करती हुई, छम-छम की क्वणन-ध्वनि के साथ यह वर्षा-दुलहिन आ रही है।

◈ ◈ यह वर्षा-दुलहिन, चमचमाहट करती हुई चूंदड़ी पहिने हुए है—तीतरवरणी। कज्जल की सी गोट लगी है इसके चारो तरफ। प्रेम की डोरी मे बंधी हुई सुन्दर गिणगौर के समान मन को लुभाती हुई यह चली आ रही है—झूठी प्रीत जताती हुई, झीने-झीने घूंघट मे शरमाती हुई। मुग्ध दर्शको को ठगती हुई, चली आ रही है यह वर्षा-दुलहिन।

◇ ◈ घिर-घिर कर, घूमर के मस्ताने दाव भरती हुई, कुछ रुकती-सी, कुछ थमती-सी, यह बिरखा दुलहिन चली आ रही है—भंवती हुई। देश-विदेशो के चक्कर काटती हुई, यह बिरखा बीनणी चली आ रही है—बिजलिया चमकाती हुई, झब-झब-सा छिन-पल छिन-पल, प्रकाश चमकाती हुई।

◇ ◇ यह परदेशिन-पाहुनी बेला-कुबेला कुछ भी नही देखती। जब जी करता है, प्रियतम के आंगन मे बरस पड़ती है। मनचाही खुशिया मनाती है। झिरमिर गीत सुनाती हुई, भोले मनडो को भरमाती हुई, छल का इन्द्रजाल फैलाती हुई, यह वर्षा दुलहिन चली आ रही है—प्रेम-भरे गीतो की गर्जन-तर्जन के साथ, मुस्कराती हुई। यह

चांनणी रात

हसै गिगन मे चादड़ल्यौ
कोई किरत्या फेरा खाय,
लूरा लेती हिरण्या नाचै
हियौ हिलोळा खाय ।

रात रंगीली चानणी जी मस्त पवन लहराय
हे धरती पूछचौ चाद नै, झिलमाझिल आधी रात.
क्यू परणी, बिलखै कांमणी जी कहदै मन री वात ?
बोल्यौ चाद विसरग्यौ ढोलौ, नैणां नींद न आय

हसै गिगन मे चादडल्यौ, कोई किरत्या फेरा खाय ।
सरवरियै नै लहरा पूछचौ क्यू आई पिणियार ?
पिणघट बोल्यौ भवर मिलणनै आई भोळी नार
रोग लगायौ प्रीत रौ नै फिर-फिर भटका खाय
रात रंगीली चानणी जी मस्त पवन लहराय ।

गोरी ऊभी गोखड़ै नैं गिण-गिण तारा रोय
जोडी मिळनैं बीछड़ी जी प्रीत न करजौ कोय
है काजळ बोल्यौ : बावळी क्यू आसूडा ढळकाय
लूग लेती हिरण्या नाचै, हियौ हिलोळा खाय।

हस गिगन मे बादड़ल्यौ
कोई किरत्या फेरा खाय,
गान रंगीली चानणी जी
मस्त पवन लहराय ।

७ गगन मे चाद हस रहा है । किरतो का समूह कोई फेरे खा रहा है । लूगे लेती हुई हिरणये नाच रही है । इस अलौकिक समन्वय को निहार कर हृदय का समदर खुशी की हिलोरो मे झूम उठा है । यह रंगीला चाद ! यह रंगीली चादनी ! और यह लहराता हुआ मस्त पवन ! झिलमाझिल आधी रात के समय धरती ने चाद से पूछा उस सुनहली वेला के बीच भी यह परणी इस तरह क्यो बिलख रही है ? उसके मन का दरद जानते हो तो बतलावो मुझे ! चाद ने उत्तर दिया कि उसका प्रियतम उससे बिछुड गया है । वियोग के कारण उसकी आखो मे नीद नही आ रही है। गगन मे चाद हस रहा है । किरत्यो का समूह कोई फेरे खा रहा है। लूगे लेती हुई हिरणये नाच रही है। रगीला चाद, रगीली चादनी और लहराता हुआ यह मस्त पवन !

◈ ◇ चचल लहरो ने सरवर से पूछा : आधी रात के समय यह पनिहारिन क्यो आई है ? पनघट ने उत्तर दिया : यह अबोध पनिहारिन अपने प्रियतम से मिलने आई है। प्रीत का असाध्य रोग लगा है इसे। उसी दर्द के मारे वह इस तरह भटक रही है। यह रगीली रात और यह रगीली चादनी ! और यह लहराता हुआ मस्त पवन ! गगन मे चाद हस रहा है। किरत्यो का समूह कोई फेरे खा रहा है। लूरे लेती हुई हिरण्ये नाच रही है।

◈ ◈ यह रगीली रात और यह रगीली चादनी ! गोगवडे मे खडी कोई गोरी झिलमिल तारो को गिन-गिन कर रो रही है। जोडी मिली और मिलते ही बिछुड गई। बावली प्रीत का रोग भी कैसा बावला है। न कभी कोई ऐसी प्रीत करना और न कभी कोई ऐसा रोग पालना ! आखो के काजल ने रोती हुई गोरी को समझाया बावली, क्यो व्यर्थ आसू बहा रही है ! प्रीत का यह जजाल छोड और सुख की नीद सो ! लूरे लेती हुई हिरण्ये नाच रही है। हृदय का समदर खुशी की हिलोरे ले रहा है। गगन मे चाद हस रहा है। किरत्यो का समूह कोई फेरे खा रहा है। यह रगीला चाद ! और यह रगीली चादनी ! और लहराता हुआ यह मस्त पवन !

आलीजौ भंवर

चंदा रे, तारा री टोळी में
म्हारौ आलीजौ भवर व्है तौ जोय !
'गोरी हे, गिगन में नवलख तारा
ज्यामें आलीजौ भवर म्हनै दीसै नहि कोय !'
चंदा रे, तारा री टोळी में
म्हारौ आलीजौ भवर व्है तौ जोय !

'हिरण्या में हेर, थोडौ किरत्या में जोय
चम-चम चानणी रै चिळकै में जोय
इण खूणै जोय, थोडौ उण खूणै जोय
पूरब पिछम धुर दिखणादौ जोय'
'आभै में धरा रौ वासी वसै नहि कोय
सैयां हे, सैणा री वाडी में थारौ छैलभवर व्है तौ जोय !'
भवरा रे, फूल-कळी में म्हारौ
मतवाळौ मारू व्है तौ जोय !
माईणौ साजन व्है तौ जोय !

हेली ए, बाड़ी मे सुरंगा फूल, फूलां री सुगंध
छैलभवर म्हनै दीसै नहि कोय !
गजरा नै अतर मोलावण गयौ मोय
जिण विलमाय लियौ कुण जाणै कोय
चम्पौ नै चमेली थोड़ौ केवड़ै मे जोय
मेहदी रै झाड बैरी महूड़ै मे जोय
डाळ-डाळ जोय व्है तौ पांन-पांन जोय !
'नाजू हे, पाणीड़े री पाळ वादीळौ ढोलौ व्है तौ जोय !'

हंसा रे, सरवर तीर म्हारौ साईणौ साजन व्है तौ जोय !
'पणियारी हे, सरवर नीर अथाग
तीर रे, रंगीलौ राजा दीखै नहि कोय !'
तीर माथै जोय कोई अधविच जोय
झोला मे, हिलोळा मे, लहरां मे जोय
इण छेड़ै जोय व्है तौ उण छेड़ै जोय
माछळी रे अेड़ै-छेड़ै ऊंडै जळ जोय !

लहरां बोली : नाजू हे, इतरी भोळी मत होय
नैणां मे, काजळ री कोर, पलकां मे जोय
मेहदी रै सुरंगे रंग, हींगळू मे जोय
रग-रग, मनरी लगन व्है तो जोय !

चंदा रे, तारां री टोळी में
म्हारौ आलीजौ भवर व्है तौ जोय !
'गोरी हे, गिगन मे नवलख तारा
ज्यामे आलीजौ भवर म्हनं दीसै नहि कोय !',

◇ मेरा प्रियतम मुझ से बिछुड गया है। चदा भैया, तारो की टोली मे यदि मेरा प्रियतम हो तो उसे खोज कर मेरे सुपुर्द करो !

◇ ◇ 'बावली कही की, गगन में नौ लाख तारे है—उनमें मुझे तो कही भी तेरा प्रियतम दिखलाई नही पडता !' चदा भैया, मुझ विरहिन के साथ इस तरह उपेक्षा न बरतो ! जरा गौर करके देखो ना, तारो की टोली मे जरूर होगा मेरा प्रियतम। हिरण्यो मे हेरो ! थोडा किरत्यो मे देखो ! चादनी के उजाले में देखो ! इधर देखो इस कोने मे ! जरा उधर देखो उस कोने मे ! पूरब, पच्छिम, उत्तर, दखिखन कही भी हो उसे हेरो ! कैसे भी हो, उसका पता लगा कर उसे मेरे हवाले करो !

◇ ◇ 'पगली कही की, इतनी दूर आकाश मे धरा का वासी कैसे निवास कर सकता है ? किसी बाडी-बगिया मे तेरा छैलभवर लुक-छिप कर बैठा होगा। वहाँ जाकर उसकी जांच-पड़ताल कर !'

◇ ◇ रे भवरा भैय्या, तेरी बगिया में मेरा मतवाला मारू हो तो उसका पता लगाओ ! फूलों मे, कलियों मे, कही भी हो, मेरे सयाने साजन को खोज कर मेरे सुपुर्द करो ! मै जनम-जनम भर तुम्हारा बखान करूगी ! 'मेरी बाडी मे तो सुरगे फूल है। फूलो की सुहानी सुगन्ध है। सुरगी कलियां है। और कलियों की सुगन्ध है। मुझे तो यहां तेरा छैलभवर कही भी दिखाई नही पडता !'

◈ ◈ मेरा प्रियतम मेरे लिए गजरे लाने गया था। मेरा प्रियतम मेरे लिए इत्र-फुलेल लाने गया था। कौन जाने उसे बीच राह मे किसने बिलमा लिया ? भवरा भाई, उसे थोडा चपे की कलियो मे देखो ! चमेली के फूलो मे देखो ! थोडा केवडे के फूलो मे निहारो ! मेहदी की झाडबेरियो मे हेरो ! न हो तो थोडा महुडे मे भी हेरो ! डाल-डाल उसका पता लगाओ ! मेरी खातिर उसे पान-पान मे देखो ! वह जरूर तुम्हारी बगिया मे रम गया होगा। 'नही, बाला नही, तेरा प्रियतम मेरी बाडी मे कही भी नही है। वह जरूर कही सरवर की पाल पर विश्राम कर रहा होगा। वहा जाकर उसे देखो ! तुम्हारा हठीला मारू जरूर तुम्हे मिलेगा।'

◇ ◈ हसा भैय्या, सरवर के किनारे मेरा सयाना साजन हो तो देखो ! मैं कब से उसे खोज रही हू। 'भोली पनिहारिन, इस अथाग सरवर के पानी का कही कोई थाह भी तो नही। कैसे उसका पता लगाऊ ? इस सरवर के तीर पर तो तुम्हारा रगीला राजा मुझे कही भी दिखलाई नही पडता।' तीर पर जरा एक बार और देखो ! वहा न मिले तो सरवर के मझ मे देखो ! लहरो मे देखो ! लहरो की तरगो मे देखो ! सरवर के हिलोरो मे देखो ! न हो तो इस किनारे देखो, उस किनारे देखो ! मछलियो के इधर-उधर हेरो ! अथाग जल की गहरी थाह लेकर देखो ! वियोगिन के निष्फल हठ को देख कर लहरो ने जवाब दिया कितनी भोली हो तुम ! तुम्हारा प्रियतम तुम्हारे ही पास है और तुम इधर-उधर उसकी खोज मे भटक रही हो। तुम्हारी खुद की आखो मे देखो ! तुम्हारे काजल की कोर मे देखो उसे ! वह वही मिलेगा तुम्हे। पलको की चितवन मे, मेहदी के सुरगे रग मे, हिगलू की लाली मे तुम्हारा प्रियतम तुम्हे मिलेगा। रग-रग मे तुम्हारा प्रियतम तुम्हारे भीतर समाया हुआ है। मन की लगन हो तो उसे अपने ही भीतर खोजो !

◇ ◇ मेरा प्रियतम मुझ से बिछुड गया है। चदा भैया, तारो की टोली मे यदि मेरा प्रियतम हो तो उसे खोज कर मेरे सुपुर्द करो ! 'बावली कही की, गगन मे नव-लख तारे है, उनमे मुझे तो कही भी तेरा प्रियतम दिखलाई नही पडता।



पिणघट

भूण गिड़गिडी बच्या कूडिया, लाव चडस भर लावै
खाथी हालै गाय गाडरा, डागर खेह उडावै
घडा मटकिया कळस बेडलौ, वे पिणियारचा आव
खीली खोलदे खामेडा, वारौ भरचौ बोलै रे !

देख अजै तक खाली पडिया, कूडी, कोटा, खेळी
तावडियै मे तिरसा मरती, भैंस्या ऊभी भेळी
कोठै दोळौ साड कळपतौ, फिर-फिर पाछौ जावै
खीली खोलदे खामेडा, वारौ भरचौ बोलै रे !

वाजै टणमण टोकरिया रे, चापौ चारै गोरी
पावण लायो पीच डागरा, वाटा जोवै थारी
मोडौ मत कर तेवण वाळा, जाखोडौ अरडावे
खीली खोलदे खामेडा, वारौ भरचौ बोलै रे !
ऊचण लागी नार नवेली, माथै ऊपर मटकी
वाजूडै री लूवा वैरी, ईढाणी मे अटकी

पिणघट ऊभी पिणियारी ग पल्ला पून उडावै
खीली खोलदे खामेडा, वारौ भरचो बोलै रे!

जान-थान मे कीकर वधग्यौ, औ पिणघट रौ मेळौ
मेववाळ सू छाटा लेवै, पाणी भरै न भेळौ
न्यारी न्यारी भरै मटकिया, ऊच नीच वतळावै
खीली खोलदे खामेड़ा, वारौ भरचौ बोलै रे!

◈ भवण, गिडगिडी और कूडिये आदि मव वधे हुए एकदम मे तैयार है। लाव चरम भर-भर कर ला रही है। प्यासी गाये और निरसी गाडरे तेजी से उतावली चल रही है। मवेशी धूल उडाते हुए गाव की ओर आ रहे है। और इधर ये पनिहारिने पनघट की ओर आ रही है—सिर पर घडे, कलश, मटकिये और वेवडे धरे हुए। खामीडा भैया, चट मे खीली खोल दे! वारा छल-छल करता, भरा हुआ आ रहा है। खीली खोल दे भाई, प्यासो की प्यास वुझाने वाला इस गाव मे परमेश्वर तू ही है।

◇ ◈ देख ना बेली, अब तक कूडी, कोठा और खेली मव खाली पडे है। चिलचिलाती धूप मे यह देख — प्यासी भैसे इकट्ठी होकर समूह मे एक साथ खड़ी है। कांठे के इर्द-गिर्द कलपता हुआ यह गाव का साड फिर-फिर कर वापिस जा रहा है। खामीडा भाई, चट से खीली खोल दे! वारा छल-छल करता भरा हुआ आ रहा है। खीली खोल दे भाई, प्यासो की प्यास वुझाने वाला इस गाव मे परमेश्वर तू ही है!

◊ ◊ मवेशी के गले मे टणगण टोकरिया बज रही है। गाव का कान्ह-ग्वाल गाया चरा कर लाया है। पीने के कुण्ड मे कब से वह अपने मवेशियो को पिलाने के लिए तेरा इन्तजार कर रहा है। अपने बलिष्ठ हाथ से चड़स खीचने वाले सिचारे, अब और देरी मत कर! देख ना भाई, ये ऊट प्यास के मारे अरडा रहे है। खामीडा भाई, अब तो चड़स की खीली खोल दे! धारा छल-छल करता भरा हुआ आ रहा है। खीली खोल दे भाई, प्यासो की प्यास बुझाने वाला इस गाव का भगवान तू ही है!

◊ ◊ यह नवेली पनिहारिन जब अपने सिर पर भरी हुई मटकी धरने लगी तो बाजू मे झूमती हुई लूबे उसकी सुरंगी ईढाणी मे अटक गई। पनघट पर खडी पनिहारिन की चूदडी का पल्ला हवा मे उड-उड जा रहा है। इस निराला वातावरण से प्रेरित होकर खामीडा भाई, चट से खीली खोल दे! धारा छल-छल करता भरा हुआ आ रहा है। खीली खोल दे भाई, प्यासो की प्यास बुझाने वाला इस गाव का भगवान तू ही है!

◊ ◊ अजीब विडम्बना है कि गाव का यह पवित्र पनघट जात-पात के ओछे दायरे मे बधकर कैसे अपवित्र हो गया? भाटी, मेघवाल व मेहतरो से छीटे लेने वाली ये तथाकथित ऊची जातिया न उनके साथ पानी भरती है और न उन्हे अपने साथ पानी भरने देती है। न्यारी-न्यारी कूडियो मे न्यारी-न्यारी मटकिया भरी जा रही है। एक दूसरे को ऊचा नीचा बतलाया जा रहा है। मनुष्य-मनुष्य मे यह कैसी विषमता? यह कैसा भेद? लेकिन खामीडा भाई, तू तो

केवल प्यासों की प्यास का ध्यान कर और अपना काम किये जा। चट से खीली खोल दे भाई, वारा छल-छल करता भरा हुआ आ रहा है। प्यासों की प्यास बुझाने वाला इस गाव का भगवान तू ही है।



हालरियो

पालणै में सोज्या पिरथीपाळ ।
गीत सुणाऊं वाला, सोज्या नैना वाळ !

मावड वैठी थेपडै ने हियो हुळराय
दूध पियां नै दो दिन हुयग्या, नींद कठा सूं आय ।

म्हारै काळजा री कोर
इण मे जामण रौ काई जोर ।

जे थूं वाला लोई पीवै, चीर चामडी पाऊं
खारौ पाणी पीतौ व्है तौ आमूंडा ढळकाऊं
सोज्या घर रा चानणा रै भूखां रा भोपाळ
पालणै मे सोज्या पिरथीपाळ ।

धमक-धमक घण बजै हथोडा, कमतरिया रा बाजा
काची नींद भिचक मत जाजै, अै सपना रा राजा !

घुरै नगारां री धांक
धूजै कांपे तीनूं लोक !

नेहच नांद लियां जा नैना, या सूं कदै न डरणौ
जीणौ जग मे गाजा-बाजा, ढोल घुरतां मरणौ
देख गुडाळचां हालै उण दिन, डूंगर डिगणौ चहीजै
अंडी हरथळ मेलै रे बेटा, आभौ झुकणौ चहीजै
थडी करै जद आणी चहीजै, धरती मे भूचाल
पालणै मे सोज्या पिरथीपाळ ?

बाळपणै म गढ कोटां री, अेक सुणी म्है बात
राजा राणी हुता देवना, झुकती प्रजा अनाथ
देख कांमणी रौ रूप
लाज लूट लेता भूप !

पण अबै तौ वे दिन अैडा फिरचा, राजा रहचा न राणी
खेती खडनै पेट भरै है, ठाकर नै ठकरांणी
सडकां ऊपर करै मजूरी, मोटा सेठ सेठांणी
करसा नै मजदूरा आगै भरै अमीरी पाणी
नवौ जमांनौ, नवी बात रौ ऊग्यौ सूरज लाल
पालणै मे सोज्या पिरथीपाळ !

◇ मेरे लाल, जैसे भी हो तू एक बार सोजा ! तू पृथ्वी का पालनहार ! तू धरती का धारणहार ! सोजा मेरे लाल, सोजा ! मीठे-मीठे गीत और मीठी-मीठी लोरिया सुनाऊगी मै तुझे, सोजा !

◇ ◇ मा तेरी तुझे थपकिया दे रही है, सोजा ! कितना आनन्द है इन थपकियो मे कि मा अपने हाथ से अपने लाल को थपथपा रही है। कितना दु ख है इन थपकियो मे कि अपने भूखे बच्चे को मा दूध पिला नही सकती। दो दिन हो गये तुझे दूध पिये हुए, फिर कैसे नीद आये ? क्योकर नीद आये ? मेरे लाल, तू ही बता मै इसके लिए क्या करू ? एक जनम देने वाली मा अपने बच्चे को जिन्दा रखने मे बेबस हो—इससे अधिक दुख और क्या हो सकता है ?

◇ ◇ मा के आचल मे यदि दूध नही है तो न सही, उसके शरीर मे खून तो है। मेरे लाल, यदि रक्त पीने मे तेरी भूख शान्त हो सकती हो तो मा के शरीर का खून और किस काम आयेगा। खारे पानी से तेरी भूख शान्त होती हो तो फिर ये आखे किस दिन के लिए है। तू पीना चाहे तो मै आसुओ का समुद्र लहरा दू। मेरे घर की जगमगाती जोत तू ही है—सोजा ! इस धरती पर तू अकेला ही भूखा नही है—लाखो करोडो इन्सान भूखे है। भूख से मरने वाले इन सभी इन्सानो का तू राजा है। तू पृथ्वी का पालनहार है—सोजा ! तेरी मा तुझे सोने के लिए कह रही है—सोजा मेरे लाल !

◇ ◇ तेरे कानो मे जो यह लगातार आवाज आ रही है—वह मेहनत करने वाले इसानो की मेहनत के स्वर है। ऐसा ही होता

है कमगरो की मेहनत का साज-संगीत—कभी हथौडो की धमक, तो कभी घनो की धमधमाहट। मेरे सपनो के राजा, इन आवाजो को सुन कर तू कही अपनी कच्ची नींद से भिचक मत जाना! ये नगारे वज रहे है। और यह नगारो की धोक पर धोक धमक रही है, जिसकी प्रचण्ड ध्वनि से तीनो लोक थर्रा रहे है, लेकिन तू निर्भय होकर सोजा! ये डरने-घबराने की आवाजे नही है। इस दुनिया मे इसी तरह गाजे-बाजो के साथ जीना है तुझे और ढोल के डके की बुलन्दगी के साथ मरना है तुझे! तू जिस दिन घुटनो के बल चले और तेरी उस गति के सामने बडे-बड़े पर्वत डिग पडे तो समझूगी कि तेरा चलना सार्थक हुआ। धरती पर तेरी हत्थल पडे तो ऐसी पडे कि आकाश तक झुक जाय—तो समझूगी कि तेरा वार सार्थक हुआ। और जब तू अपने पावो पर पहली बार खडा हो तो साथ ही उसके समस्त धरती मे एक बार भूचाल आये—तब समझूगी कि तेरा खडी करना सार्थक हुआ। पर आज तो तू भूखा ही सोजा! पृथ्वी का तू पालन हार है—सोजा मेरे लाल! तेरी मा तुझे सोने के लिए कह रही है।

◇ ◈ अपनी बाल-अवस्था मे मैं गढ-कोटो की ही बाते सुना करती थी। राजा-रानियो को देवता की जगह समझा जाता था। गरीब और अनाथ प्रजा उनके पावो मे अपना सिर झुकाती थी। तब राजा की मर्जी ही सबसे बडा न्याय और कानून थी। किसी सुन्दर स्त्री की सुन्दरता के बारे मे राजा ने देखा-सुना नही कि उसके हुकम से लज्जा का अपहरण हो जाना था। लेकिन अब तो वे दिन इस कदर फिर गये है कि न कोई राजा ही बचा है, न कोई रानी। ठाकुर और ठकुरानी खेती करके अब अपना पेट भर रहे है। बडे-बडे सेठ और सेठानी सडको पर खुली मजदूरी

कर रहे है। किमान - मजदूरो की मेहनत के सामने अमीर - उमरावो की अमीरी पानी भर रही है। वह भी जमाना था और अब यह भी जमाना है। नया जमाना और नई बाते। खून-पसीने की कमाई करने वालो का गुलाबी सूरज अब ही उदय हुआ है। पृथ्वी का पालन करने वाले, सोजा ! मा तेरी तुझे सोने के लिए कह रही है। मीठे - मीठे गीत और मीठी - मीठी लोरिया सुनाऊगी मै तुझे !



हळोतियौ

चौमासै रा गुडळा वादळ, पालर बूठा पांणी
भीजै वळद किलोडिया, आ चवै जूनकी ढांणी

हळिया जोतौ रै कांमेती
खेती निपजै धणियां हेती
हाळी बीज रौ हळोतियौ

कूमठ रौ हळ, चऊ सुरगी, नाई वीजणी सोवै
काढ ऊमरा धरती थारी आभै ने काई जोवै
माटी कण रौ मण निपजावै, वेलडियां फूलाणी
चौमसै रा गुडळा वादळ, पालर बूठा पाणी

हळिया जोतौ रै हाळैती
खेती निपजै धणिया हेती
हाळी वीज रौ हळोतियौ !

काळ बरस रै पड़ी बीजळी, गैरौ इन्दर गाजै
भातौ लै भतवार खेत मे, मझ दोफारा आजै

खाटो खोच सांगरा लाजे, मोठोडो गळत्राणी
चौमासै रा गुडळा बादळ, पालर बूठा पाणी

हळिया खडलौ रै कामेती
खेती निपजै धणियां हेती
हाळी बीज रौ हळोतियौ।

ज्यू जळ बूठौ थळ मे रळियौ, ऊगी कूपळ काची
पीळौ कीकर पडग्यौ करसा, थे धरती नै राची
ऊचा मैल भुकै है. ज्यारी झूपड़िया सैनाणी
चौमासै रा गुडळा बादळ, पालर बूठा पांणी

हळिया जोतौ रै कामेती
खेती निपजै धणिया हेती
हाळी बीज रो हळोतियौ।

◇ चौमासे की यह सुरंगी मौसम। और ये चौमासे के दूध-वरणे गुडळे बादळ। दूध के समान मीठा-मीठा पालर पानी बरसाते हुए ये सुहाने बादल। सुरंगे बादल। मतवाले बैल इस पानी मे खडे भीग रहे है। और काली स्याह पडी हुई यह पुरानी ढाणी इस बरसते पानी मे चू रही है। किसान भाइयो, अपने-अपने हल जोतो। यह खेती तो मनुष्यो की मेहनत का ही फल है। हाळीबीज का यह पहिला हळोतिया

है — किसान भाइयो ! अपने-अपने हल लेकर खेतो मे चलो !

◇ ◈ सुरगी कूमठ का यह सुरगा हल ! यह सुरगी चऊ ! और सुरगे बीज बोने वाली यह सुरगी सुहानी नाई ! और उस पर तुम्हारी यह सुरगी मेहनत ! फिर इस तरह देख-विचार क्या रहे हो ? जोत डालो अपनी मेहनत से सारी धरती के ये सारे खेत ! जब खेतो मे धान निपजाने वाली मेहनत तुम्हारी है तो यह खेत ही तुम्हारे है। खेतो से निपजने वाला सारा का सारा धान भी तुम्हारा है। सूने आकाश की ओर इस तरह सूनी दृष्टि से क्या देख रहे हो ! जोत डालो सारी धरती के ये सारे खेत ! तुम्हारी मेहनत से प्रसन्न होकर यह स्नेहमयी माटी कण का मण निपजा कर देती है। यह तुम्हारी मेहनत ही तो है जो इस माटी मे सुरगी वेलडिया और सुरगे फूल सवारती है। चौमासे के ये दूध-वरणे गुडळे बादल—दूध के समान मीठा-मीठा पालर पानी बरसाते हुए ! किसान भाइयो, अपने-अपने हल जोतो ! यह खेती तो मनुष्य की मेहनत का फल है। हाळीबीज का यह पहिला हळोतिया है—किसान भाइयो ! अपने-अपने हल लेकर खेतो मे चलो।

◇ ◈ काल बरस पर बिजली पड चुकी है—सब तरफ हरियाली और बरसात ही बरसात ! इन्दर भगवान अपनी गर्जन मे मानवीय खुशियो को प्रतिध्वनित कर रहे है। किसान मस्ती मे गीत गाते हुए खेतो मे

काम पर जुटे हुए हैं। उन्हें ठाले बैठे रहने की एक पल भी फुरसत नहीं। हे स्नेहमयी भतवारिन ! इन कामेतियों के लिये तुम ठीक दोपहर को भाता लेकर पहुंचना—स्वादिष्ट खीच, खाटा और मोगरे लेकर! साथ मे मीठी गळवाणी भी लाना ! चौमासे के ये दूध-वरणे गुडळे बादल — दूध के समान मीठा - मीठा पाळर पानी बरसाते हुए ! किसान भाइयो, अपने-अपने हळ जोतो ! यह खेती तो मनुष्य की मेहनत का ही फल है। हाळीवीज का यह पहिला हळोतिया है — किसान भाइयो ! अपने - अपने हल लेकर खेतों मे चलो !

◎ ◎ ज्यों - ज्यों बरसात का पानी बूठा— वह रल कर जमीन मे समा गया। कची - कची सुकोमल कूपलो से धरती लहरा उठी है। पर हे भोले किसान, इन खुशियो के बीच तेरा चेहरा दुःख से पीला क्यो हो गया है! यह तेरी ही मेहनत का तो हरियाला जादू है। तेरे बलिष्ठ हाथो ने धरती को हरा - भरा किया और तेरा ही मुह दुःख से पीला है! यह कैसी विड-म्बना है? तेरी झोपडियो ही के बल - बूते पर ये महल और यह कोट - कागरे ऊंचाई मे झूम रहे है। तेरी जी - तोड मेहनत ही से दुनिया मे यह ऐश्वर्य और वैभव है। चौमासे के ये दूध - वरण गुडळे बादल — दूध के समान मीठा - मीठा पाळर पानी बरसाते हुए ! किसान भाइयो, अपने-अपने हल जोतो ! यह खेती

तो मनुष्यों की मेहनत का ही फल है। हाळीबीज का यह पहिला हळोतिया है— किसान भाइयो, अपने अपने हल लेकर खेतों में चलो!



निदांण

पान कूपळा काढिया रै, रग सुरगी रेत
ऊगौ अळियौ घास अणूतौ, आथूणै भरेत

करसा चेत सकै तौ चेत
पैली करलै रै निदाण !

साटौ घास सिनावड़ौ जी, बेकरियौ नै काटी
सळियौ खेत करै नी जद तक खेती वधै न लाठी
लागै तीखी धार कसी रै, बाढ़ै जड़ा समेत

करसा चेत सकै तौ चेत
पैली करलै रै निदाण !

चूसै घास खात नै पाणी, गाढ धान रौ गाळै
थू काई जाणै थारी मैणत, पेट किता रा पाळै
भरी गवाड़ी रैवै जद तक, करै मानखौ हेत

करसा चेत सकै तौ चेत
पैली करलै रै निदाण !

देख जमी मे जडा तूतडा, जोर जमाणो आवै
जीणो व्है तो वाध मोरचौ, लावी जेज लगावै
भोले ज्यांरा विकै वूमडा, खडै जका रा खेत

करसा चेत सकै तो चेत
पैली करल्यै रै निदाण !

◇ नन्ही-नन्ही कूपलों मे अव पान आ गये है। हरियाली का पुट पाकर यह सुरगी रेत और भी सुहानी हो गयी है। लेकिन इन नन्ही कूपलो के वीच फिजूल का घास भी वहुत उग आया है। ये पच्छिमी खेत वरसात के पानी से पूरे भर जाते है। इस व्यर्थ के घास को यदि प्रारम्भ से ही उखाड न लिया तो फिर वग की वात नहीं रहेगी। भोले किसान, समय रहते चेत जा — और अपने खेत मे सवसे पहिले निदान करले।

◇ ◇ देख, तेरी फसल मे काटी, वेकरिया, सिनावडा, माटा और न जाने कितनी जात के घास उग आये है। निश्चय जान, तेरी उगती फसल को ये यहीं का यहीं दवा देगे। जव तक तू अपने खेत को इन घातक 'तत्वो' से वचा कर साफ न कर लेगा तव तक तेरी खेती वढ न पायेगी। देर न कर, कस्सी के तीखी धार लगाले और इस नुक्सानकारी घास को जडो सहित निर्विलम्ब काट डाल! भोले किसान, समय रहते चेत जा और अपने खेत मे सवसे पहिले निदान करले !

◈ ◈ यह घास तेरे खेत का खाद तक चूस जायेगा। यह घास तेरे खेत का पानी सोख लेगा। बढती हुई फसल की ताकत को दबोच डालेगा। अब और गफलत न कर! क्या तुझे पता नही कि तेरी मेहनत से कितनो का पेट पलता है? यदि तेरी मेहनत अकारथ चली गई तो लोग भूखे मर जायेगे। जब तक गवाडी मनुष्यो से भरी-पूरी रहती है — तब तक ही उस गवाडी की शोभा है, प्यार और मोहब्बत है। भोले किसान, समय रहते चेत जा और अपने खेत मे सबसे पहिले निदान करले!

◈ ◈ तेरी जमीन और तेरी जिन्दगी मे कई घातक तत्व अपना अधिकार जताना चाहते है। जमीन के इन घातक तत्वो का निर्मूल निदान कर डाल! और जिन्दगी के इन घातक तत्वो का भी निर्मूल निदान कर डाल! यदि तुझे निर्भय जीना है तो मोर्चा बाध ले! बडी देर लगा रहा है तू! अब और गफलत न कर! जो बोलता है उसके बूमडे भी बिक जाते है और चुप रहने वाले का बढिया धान भी पडा रह जाता है। खेत पर अधिकार, खेत पर काम करने वाले का। बाकी सब अधिकार झूठे है। भोले किसान, समय रहते चेत जा और अपने खेत मे सबसे पहिले निदान करले!

पांणतियौ

सूडियै रा सीचारा वळदा नै वैगा हाकजै
पावणी है कोरवाण, पूरौ चेतौ राखजै —

वारौ भरियौ आवै है !
नीर निवायौ लावै है !

वायरै रा ठडा झोला साम्ही छाती झेलजै
पैलौ जोटौ आवै है, पाणतिया खोडौ घेरजै !

पून गैली काई जाणै, मतवाळौ हू
हेम जैडा हाड म्हारा, पाणतवाळौ हूं
झगडै रौ कोड व्है तौ हेमाळै नै मेलजै
पावणी है कोरवाण, पूरौ चेतौ राखजै !

धोरै-धोरै पाणी ढळै, वीज पीवै है
धरती नै सीचै जका लोग जीवै है—

डाफर वाजै जाडो है !
आवौ डील उघाडौ है !
मैणत रौ अखाडौ है !

बायरै रा ठडा भोला साम्ही छाती भेलजै !
पैलौ जोटौ आवै है, पाणतिया खोडौ घेरजै !

हेम जैडा हाड म्हारा सीयाळै री रात
पाळौ जै पडै तौ काई जीत म्हारै हाथ
भगडै रौ कोड व्है तौ हेमाळै नै मेळजै
पावणी है कोरवाण, पूरौ चेतौ राखजै !

धोरै-धोरै पांणी ढळै, धरती सिंचीजै है
माटी बीज मागै, भाई मानखौ पतीजै है—

धोरै घीयौ दीनौ है !
बीजा पाणी पीनौ है !
रूप नवौ कर दीनौ है !

माटी मुजरौ लीनौ है, कांमेती हसने बोलजै
पैलौ जोटौ आवै है, पाणतिया खोडौ घेरजै !

सूडियै रा सीचारा वळदा नै वैगा हाकजै
पावणी है कोरवांण, पूरौ चेतौ राखजै !

नीर निवायौ वारौ आयौ, धोरा पाळी वाधजै
घणी भळावण काई देवू हेलौ म्हारौ सामजै !

साभळचौ भाई साभळचौ , वळदा नै खाता हाकजै
पावणी हे कोरवाण , पूरौ चेतौ राखजै !

वायरै रा ठडा झोला साम्ही छाती झेलजै
पैलौ जौटौ आवै है, पाणतचा खोडौ घेरजै !

◈ सूडिये के सिचारे, अपने वैलो को भैया जरा जल्दी-जल्दी हाको ! कोरवाण पिलानी है—पूरी-पूरी सावधानी वरतना ! वारा छलछलाता भरा-पूरा आ रहा है। ताजे निवाये जल से भरा हुआ।

◈ ◈ पाणतिया वीरा, मेरे काम के प्रति तुम पूरे निश्चित रहो । आसान काम है — आसानी से सभाल लूगा । तुम्हारा काम वडा कठिन है — तुम जरा होशियारी रखना ! सियाले की यह ठडी रात और ये ठडे झोले ! ये सब कठिनाइया तुम्हे अपनी छाती पर झेलनी है । पहिला जोटा आ रहा है — भाई जरा सावधानी ! खोडा घेरो ! पीच-पाळी वाधो ! ठडी रात ओर हवा के ये ठडे झोले !

◈ ◇ वावली हवा क्या जाने कि मै कौन हू ? मै पाणत करने वाला हू । अपनी धुन मे मस्त — मतवाला । वर्फ के समान हड्डिया है मेरी । फिर इस ठडी हवा और इन

ठंडे झोलो की क्या मजाल कि मेरा सामना करे ? यदि लडाई ही की मन मे हो तो हिमालय पहाड को ही सामने करना । मुझ पाणतिये की चुनौती है, हिमालय को। तुम मेरी चिन्ता न करो । आसान काम है–आसानी से सभाल लूगा । तुम्हारा काम मुझ से कठिन है—जरा होशियारी से भाई ! कोरवाण पिलानी है । पूरी-पूरी सावधानी वरतना !!

◇ ◇ धोरो मे पानी बह रहा है—लहराता हुआ । सजे-सवारे खेतो मे बीज पानी पी रहे है । सूखी धरती को इस तरह अपने पसीने से सींचने वाले लोग ही जीने के सच्चे अधिकारी है—युग-युग तक जीयेंगे । भयकर सर्दी है ! भयकर डाफर वज रहा है ! आधी रात और यह अध-नगा शरीर ! फिर भी जिन्दगी के इस अखाडे में मेहनत करने वालो की जीत निश्चित है ।

◇ ◇ सियाले की यह ठडी रात और ये ठडे झोले ! पाणतिया भाई ! ये सब कठिनाइया तुम्हे अपनी छाती पर झेलनी है । पहिला जोटा आ रहा है — भाई जरा सावधानी से ! खोडा घेरो ! पीच-पाळी बाधो ! ठडी रात और हवा के ये ठडे झोले !

◇ ◇ वर्फ के समान हैं मेरी हड्डियां और वर्फ के समान ही है मेरी मास-पेशिया । चाहे सियाले की रात हो, चाहे ठडे झोले । मुझे किसी की परवाह नही है । पाला भी पड जाय तो क्या, जीत तो मेरे ही हाथ है । यदि झगड़े का ऐसा कोड है तो फिर हिमालय पहाड़ को

हीं सामर्न लाओ। इन छोटी-मोटी वातो की तो न मैंने आज दिन तक चिंता की है और न करूंगा। कोरवाण पिलानी है, तुम अपने काम का पूरा-पूरा ध्यान रखना !

◇ ◇ धोरों में लहराता हुआ पानी वह रहा है। सूखी धरती की सिंचाई हो रही है। मिट्टी बीज मांग रही है। हरियाली के साथ साथ मनुष्यों का विश्वास भी इन खेतों में लहरा रहा है। धोरों में सफाई के साथ धीया फेर दिया है। बीजों ने भरपूर पानी पी कर नया रूप धारण कर लिया है। स्नेहमयी माटी ने मुजरा स्वीकार कर लिया है। कामेती बीरा, हंसते मुसकराते हुए ही बात करना, अपनी महनत फल रही है! पहिला जोटा आ रहा है—भाई, जरा सावधानी से! खोडा घेरो! पीच-पाळी वाधो !

◇ ◇ तुम मेरी चिंता न करो। अपने बैलों को जल्दी जल्दी हांकना भाई, कोरवाण पिलानी है! पूरा पूरा ध्यान रखना ! होशियार !

◇ ◇ निवाये जल का छलछलाता वारा आ गया है, अच्छी तरह तैयार रहना। पीच-पाली बांध कर! धोरा-धाली सजा कर! ज्यादा सभाल देना ठीक नहीं— मेरी आवाज को अच्छी तरह सुन लो!

◇ ◇ सुन लिया भाई सुन लिया! तुम अपने बैलों को जल्दी-जल्दी हांको। कोरवाण पिलानी है। पूरा-पूरा ध्यान रखना !

◇ ◇ सियाले की यह ठडी रात और ये ठडे झोले ! ये सब कठिनाइया तुम्हे अपनी खुली छाती पर झेलनी है। पहिला जोटा आ रहा है — भाई, जरा सावधानी से ! खोडा घेरो ! पीच-पाली बावो ! ठडी रात और हवा के ये ठडे झोले !



पांणत

माळ फिरै ज्यूं पनडी वाजै, फिरै काळियौ डोरौ
ओड़ू पाणी भरै घड़लिया, आगै हालै धोरौ
रूपल रेत रे !

पैलौ जोटौ आवै है, पांणतिया वीरा चेत रे
कोई पाणत गंगा ऊतरै !

धोरै पांणी ढळै ढाळियौ है माटी रौ धीयौ
कोरवांण में करै चानणौ, दीवाळी रौ दीयौ
आभै ऊपर हंसै किरतिया, मन विलमावै वौरौ
जूना हेत रे !

माळ फिरै ज्यूं पनडी वाजै, फिरै काळियौ डोरौ
ओडू पाणी भरै घडलिया आगै हालै धोरौ
रूपल रेत रे !

पैलौ जोटौ आवै है, पाणतिया वीरा चेत रे
कोई पाणत गंगा ऊतरै !

आडंग आवै मावटै रौ, पडण लागज्या पाळौ
हेमाळै सू होड करणनै, ऊभौ खेत रुखाळौ
सीयाळै री रात मे, भाई पाणत करणौ दोरौ
ठडा खेत रे !

माळ फिरै ज्यू पनड़ी बाजै, फिरै काळियौ डोरौ
ओडू पाणी भरै घडलिया, आगै हालै धोरौ
रूपल रेत रे !

पैलो जोटौ आवै है, पाणतिया वीरा चेत रे
कोई पाणत गगा ऊतरै !

भारत मे भागीरथ लायौ, भाखर ढळती गगा
पण थेट पताळा नीर निवायौ, आवै पाणत गगा
लीली खेती लहरावै है, दै पाणतियौ पौरौ
साख समेत रे !

माळ फिरै ज्यू पनडी बाजै, फिरै काळियौ डोरौ
ओडू पाणी भरै घडलिया, आगै हालै धोरौ
रूपल रेत रे !

पैलो जोटौ आवै है, पाणतिया वीरा चेत रे
कोई पाणत गगा ऊतरै !

◈ अरट की माल घूम रही है। साथ ही उसके, खड़िन्द-खड़िन्द पनडी वज रही है। समय का निर्देश करता हुआ काला डोरा भी अरट के साथ घूम रहा है। माल से वधी घड़लिया ओड़ू में पानी भर रही है। ओड़ू से निकल कर पानी आगे धोरे मे वह रहा है। धोरा मिट्टी का वना है। सजी-सवारी मिट्टी चादनी के समान चमकती दिखाई दे रही है। धोरे मे पानी का पहिला जोटा निरतर आगे वढ रहा है। पाणतिया वीरा, चेत ! शीघ्र चेत ! कोई पाणत गगा तेरे खेत मे उतर रही है।

◈ ◈ धोरे से पानी फट कर ढालिये मे घिर आया है। एक-एक वूंद पानी की कीमत है—इसे व्यर्थ सोखने न दो ! धोरे और ढालिये मे चिकनी मिट्टी का घीया दो ! धोरे का चमकता पानी ही कोरवांण मे दीवाली के दीये के समान उजाला करेगा। ऊपर आकाश मे किरतियां हस रही है। खेत मे उगती फसल के लोभ से महाजन अपना मन बिलमा रहा है। किसान के साथ उसका पीढ़ियों का पुराना हेत जो है।

◈ ◈ अरट की माल घूम रही है। साथ ही उसके, खडिन्द-खडिन्द पनडी बज रही है। समय का निर्देश करता हुआ काला डोरा भी अरट के साथ घूम रहा है। माल से वधी हुई घड़लिया ओड़ू मे पानी भर रही है। ओडू से निकल कर पानी आगे धोरे मे वह रहा है। सजी-सवारी मिट्टी पानी के सयोग से चांदी के समान चमक रही है। धोरे मे पानी का पहिला जोटा निरतर आगे वढ रहा है। पाणतिया वीरा, चेत — शीघ्र चेत ! कोई पाणत गंगा तेरे खेत मे उतर रही है।

◈ ◈ सर्दियों के दिनों मे मावर्ट का आडग महसूस हो रहा है। रात को पानी मे पाले की पपडिया जम जाती है । इस सर्दी की रातो मे भी हिमालय की शीतलता को चुनौती देता हुआ रखवाला खेत की रखवाली कर रहा है । सर्दियों की रातो मे भैया पाणत करना वडा मुश्किल है । ठडी रात ! ठडी हवा और ये ठडे खेत ।

◈ ◇ एक भागीरथ मुनि हुए थे जो इस भारत में हिमालय पर्वत से ढाल कर गगा जैसी नदी लाये, और एक यह पाणत गगा है जो ठेट पताल से निकल कर धरती पर बही चली जा रही हैं । निवाया जल है इस पाणत गगा का ! खेत मे हरी खेती लहरा रही है । पाणतिया सिंचाई के साथ उसकी रखवाली भी कर रहा है । सम्पूर्ण साख की रखवाली — आस्था व निष्ठा के साथ ।

◈ ◈ अरट की माल घूम रही है। साथ ही उसके खडिन्द, खडिन्द पनडी बज रही है । समय का निर्देश करता हुआ काला डोरा भी अरट के साथ घूम रहा है । माल से बधी घडलिया ओडू मे पानी भर रही है। ओडू से निकल कर पानी आगे धोरे मे बह रहा है। सर्जी-सवारी मिट्टी पानी के सयोग से चादी के समान चमक रही है । धोरे मे पानी का पहिला जोटा निरतर आगे बढ रहा है । पाणतिया वीरा चेत—शीघ्र चेत ! कोई पाणत गगा तेरे खेत में उतर रही है ।

वीघोड़ी

धन्नी नै भीचा म्है तौ लोहीडै री धार
इनगी कीकर मागं ओ वीघोडी सरकार ?

छाळा पड़ग्या मूड़ करतां, हाथा आई-ठाण
कम्मर हुयगी वेवडी जी करता निदाण
तोई कीकर मागं ओ वीघोडी सरकार ?

पाणत करै पागतियौ रे मियाळै री रात
छूल गई चांमड़ी, चिरीज गया हाथ
पच्छै कीकर मागै ओ वीघोडी सरकार ?

खेत खडा हळ वीजा, पाणी वाधा पाळ
हिवड़ै सू मूघी राखा खेती नै रुखाळ
जणै कीकर मागै ओ वीघोड़ी सरकार ?

नैना नैना टावरां रौ मन विलमाय
आधी आधी भूख काडा पाणीडौ ई पाय
तोई कीकर मागै ओ वीघोडी सरकार ?

होळी नै दीवाळी आवै तीज रौ तिवार
नवै दिन निरणी रैवै जापै सूती नार
पच्छै कीकर मागै ओ बीघोडी सरकार ?

धरती ने सींचा म्है तौ लोहीड़े री धार
इतरी कीकर मागै ओ बीघोड़ी सरकार ?

◈ इस धरती को हम अपने खून-पसीने से सींचते हैं, तब कहीं धान निपजता है। और इतना धान पैदा करके भी हम पशुओं के समान जिन्दगी बसर कर रहे है। फिर भी यह जालिम सरकार हम से इतनी बीघोडी क्योंकर माग रही है ?

◈◈ सूड़ करते हुए हमारी हथेलियों में छाले और गट्टे पड गये है। निंराई करते हुए हमारी कमर दुहरा गई है। हमारी मेहनत और हमारा धान ! उस पर भी हम भूखे है। फिर यह जालिम सरकार हम से बीघोडी क्योंकर माग रही है ?

◈◈ पाणतिया खेत मे पाणत कर रहा है। ठडी हवा के तीखे झोले उसके नगे शरीर में तीरो के समान चुभ रहे है। देह की चमडी छिल गई है। हाथ और पाव उसके फट गये है। फिर यह सरकार हम से बीघोडी क्यों माग रही है ?

◈ खेत हम खडते है। बीज हम बोते है। खेत मे पानी भरने के लिए पाल हम बाधते है—तब

कहीं खेत में खेती पैदा होती है। खून और पसीने की उस खेती को हम हृदय से भी महगी सवारते हैं। जिन्दगी को खतरे मे डाल कर खेत की रखवाली करते है। फिर यह सरकार हम से बौघोडी क्यो माग रही है ?

२० इतना धान पैदा करने पर भी हम अपने भूख मे रोने बच्चों का मन बिलमा कर उन्हे चुप रखने की कोशिश करते है। दूध और धान की जगह पानी पिला कर हम किसी तरह भूख का सामना करते है। फिर यह सरकार हम से बौघोड़ी क्यो मांग रही है ?

८२ होली, दिवाली और तीज के त्योहार तो अपनी निश्चित तिथियों पर अपना नया और शुभ रूप लेकर आते ही है, लेकिन हमारी जिन्दगी मे तो कुछ नया और शुभ घटित नही होता। इन नये दिनों में हमारी घरवाली जापे के समय भी भूखी सोई पडी रहती है। फिर भला यह जालिम सरकार हम से बौघोडी क्योंकर मांग रही है ?

२६ इस धरती को हम खून-पसीने से सीचते है तब कही धान उत्पन्न होता है। फिर यह सरकार हम से इतनी सारी बौघोड़ी क्योकर माग रही है ?

बायरियौ

तूटै म्हारा बाजूड़ा री लूंब , लट उळझी जाय
कोई पिचरगै मोळियै रा पल्ला लहराय
वैरी चवरी री चूंदड़ी में सळ पड़ जाय !
धीमै धीमै रे बायरिया , झोलौ सह्यौ न जाय !

आवै बिरखा री रुत , झूमै सूरियौ पवन
लावै गोरी रौ सदेसौ घर आवौ रे सजन
हीडा बादळी हिडाय
बिजळी चवर ढुळाय
लागै विरखा री जड
जाणै मोतीडा री लड़
वैंगी नथडी रौ मोती उतर नहि जाय !
झीणो झीणो रे बायरिया , झोलौ सह्यौ न जाय !

ठडी वूठोडा री लेर , मीठा बटाऊ रा गीत
भली भादरवा री रात , मिळौ मनड़ै रा मीत

म्हागै प्यारी पुरवाई
आ तौ लूमझूम आई
लाई सपना सवार
बाजै हिवड़ै रा तार
देखौ लागै नहि ठेस, वीणा टूट नहि जाय !
होळै होळै रे बायरिया, झोलौ सह्यौ न जाय !

झीणी दिखणी री पून, उडै दिखणी रौ चीर
आवौ ढळतै चौमासै, नैंनी नणदी रा वीर
आयौ आसोजा रौ मास
मन मिळणं री आस
गोरी डागळियै चढ जोय
आ तौ ओळूंडी कर रोय
बैरी आसूड़ा रौ हार बिखर नहीं जाय !
धीमौ मुदरौ रे बायरिया, झोलौ सह्यौ न जाय !

❀ वैरिन हवा, जरा आहिस्ते वहो ! मेरे बाजूडे की नखराली लूवे टूट-टूट जा रही है। नागिन-सी बल खाती हुई लटे मेरी उलझी जा रही है। चवर की अमर सुहागिन चुनड़ी मे मेरे सल पड रहे है। वैरिन, जरा आहिस्ते ! वैरिन जरा धीमे ! तेरा यह असह्यनीय झोला मुझ से सहा नही जाता। धीमे चलो ! आहिस्ता वहो।

◈ ◈ बरखा की मस्तानी ऋतु आने पर मूरिया पवन मस्ती मे भूम - भूम उठता है। और उसकी मस्ती मे चिर - प्रतीक्षित विरहणी को मतवाला बना देने वाला यह मस्त सदेश : प्रवासी प्रियतम अब अपने घर चले आओ ! तुम्हारी गोरी तुम्हारा इन्तजार कर रही है। इस मतवाली बरखा को मतवाली बदली भूला भुला रही है। चचल बिजली अपने चपल हाथो से चवर ढुला रही है। निराली है यह बरखा ! और निराली है इसकी भड ! एक-एक बूद—एक-एक मोती ! बैरिन हवा जरा आहिस्ता बहो ! मेरी नथडी पर शोभित बरखा का यह सुरगा मोती कही उतर न जाय। बैरिन जरा धीमे ! बैरिन जरा आहिस्ता ! तेरा यह असह्यनीय भोला मुभ से सहा नही जाता।

◈ ◈ बरसी हुई बरसात के ये ठडे भोके ! कितने मादक ! कितने सुहाने ! और राह चलते बटाऊ के ये गीत ! कितने मीठे ! कितने रसीले ! अमृत की वर्षा करती हुई यह भादरवे की रात भी कितनी भली है ! मन के मीत मेरे इन सुरगी घडियो मे तुम्हारा विछोह मुभसे सहन नही होता। पूरब की ओर से लूम-भूम कर आती हुई यह पुरवैया भी कितनी प्यारी है ? मेरे सपनो को यह अपने स्नेहमय आचल मे सवारती हुई बह रही है—हृदय के तारो को भनभनाती हुई। बैरिन हवा, जरा आहिस्ता बहो ! तनिक-सी भी ठेस लगी नही और वीणा के तार टूटे नही ! बैरिन जरा धीमे ! बैरिन जरा आहिस्ते ! तेरा यह असह्यनीय भोला मुभ मे सहा नही जाता।

९० भीनी है यह दक्खिन की हवा और भीना ही है इसका चीर! फर-फर करता उडता ही चला जा रहा है! ढलते चौमासे की इन ढलती हुई पल-घडियो मे भी ननद बाई के सुन्दर भाई, क्या तुम से मिलना नही होगा? आश्विन का यह महीना जब लगा है तो बीत भी जायेगा। कही ऐसा न हो कि मन मे जो मेरे मिलने की आस है वह मन ही मे रह जाय। बार-बार छत पर चढ कर तुम्हारे आने का पथ निहारा करती हू। बार-बार समझाने पर भी हठीले आंसू छलछला कर नयनों की ज्योति को धूमिल बना देते है। किन्तु तुम्हारी स्मृति के परिणामस्वरूप उमड आने वाले ये आसू ही तो मुझ विरहणी के अनमोल मोती है। वैरिन हवा, जरा आहिस्ता बहो! आंसुओ का यह बेगकीमती हार मेरा कही बिखर न जाय। वैरिन जरा धीमे! वैरिन जरा आहिस्ते! तेरा यह असह्यनीय झोला मुझ से सहा नही जाता।



पग मंडणा

मडता जावै धरती माथै , पग मडणा इतियास रा
सूरज उगतौ करै सिलामी , तारा हसै अकास रा !

अै हिम्मत रा हाथ जकां में , इन्कलाब री अदभुत सगती
बटनै रहसी गिणिया दिन मे , हमै मुलक री धन नै धरती
भूख बेकारी मिटनै रहसी , अै पग है विसवास रा
मडता जावै धरती माथै , पग मडणा इतियास रा
सूरज उगतौ करै सिलामी , तारा हसै अकास रा !

देख मिनख री करड़ी मैणत , सैंचन्नण सचारै है
मोत्यां जैडी निपजै खेती , माटी रूप सवारै है
बीत चुकीअधियारी रातां, आया दिन उजियास रा
मडता जावै धरती माथै , पग मडणा इतियास रा !

चाव वणे , नैरा खुद जावे , नवौ धांन मुळकावैला
नवै देस रौ नवौ मानखौ , नवा गीतडा गावैला
चारूं कानी नवी चेतना , नवा कदम है आस रा

मडता जावै धरती माथै, पग मंडणा इतियास रा !
सूरज उगतौ करै सिलामी, तारा हंसै अकास रा !

◇ धरती पर इतिहास के पद-चिन्ह चित्रित होते ही चले आ रहे है। इतिहास के बढते कदमो को कोई भी ताकत रोक नही सकती। नित्य नया इतिहास और नित्य नये कदम ! उगता हुआ सूरज इतिहास के इन बढते कदमो को सलामी दे रहा है। आकाश के तारे हंसते हुए उनका स्वागत कर रहे है।

◈◈ ये मेहनत करने वाले हाथ है! अद्‌भुत है इनकी हिम्मत और अद्‌भुत ही है इनकी ताकत! इन्कलाब की अद्‌भुत शक्ति है — इन हाथो मे ! क्रान्ति का अदम्य साहस है—इन हाथो मे ! इन हाथो की ताकत दुनिया की विषमता को अब मिटा कर रहेगी। अब कुछ ही दिनो मे देश का धन बटेगा। देश की धरती बटेगी। ये विश्वास के हाथ है! ये विश्वास के कदम है ! भूख और बेकारी मिट कर रहेगी। धरती पर इतिहास के पद-चिन्ह चित्रित होते ही चले जा रहे है। उगता हुआ सूरज इतिहास के इन बढते कदमो को सलामी दे रहा है। आकाश के तारे हसते हुए उनका स्वागत कर रहे है।

◇◈ मनुष्य की जी-तोड मेहनत के कारण ही दुनिया मे उजाला है। यह मेहनत ही है जो सूखी धरती मे मोत्यो के समान खेती निपजाती है। यह मेहनत ही है जो माटी का सुरगा रूप सवारती हे। अधियारी राते अब बीत चुकी है। उजले दिनो का उज्वल प्रकाश सर्वत्र छितरा गया है। धरती पर इतिहास के पद-चिन्ह चित्रित होते ही चले जा रहे है। उगता हुआ सूरज

इतिहास के इन बढते कदमो को सलामी दे रहा है। आकाश के तारे हसते हुए उनका स्वागत कर रहे है।

◈ ◈ मेहनत के जादू-भरे हाथो का स्पर्श पाकर नये-नये बाध बन रहे है। नई-नई नहरे खुद रही है। मेहनत के इन जादू-भरे हाथों का स्पर्श पाकर अब शीघ्र ही समस्त धरती पर नया धान मुस्करायेगा! नये देश का नया इन्सान अब मेहनत के नित्य नये तराने गायेगा! सर्वत्र नई चेतना है। आशा के नये कदम तीव्र गति से निरतर आगे बढते ही जा रहे है। धरती पर इतिहास के पद-चिन्ह चित्रित होते ही चले जा रहे है। उगता हुआ सूरज इतिहास के इन बढते कदमो को सलामी दे रहा है। आकाश के अगणित तारे हसते हुए उनका स्वागत कर रहे है।



टिप्पणियां

[कुछ जातीयगत विशेषताओं का अतिरिक्त विवरण]

पृष्ठ संख्या

२ .. **दावौ** — सर्दी के दिनो मे एक विशेष किस्म की हवा चलने से फसल झुलस जाती है, उसे राजस्थानी मे दावा पडना कहते हैं। सब तरह की फसलो पर इसका प्रभाव एक-सा नही होता। गेहू और चनो पर इसका प्रभाव विशेपतया अधिक होता है।

२ .. **रोळी** — गेहूं की फसल मे आने वाला एक रोग-विशेष, जिससे फसल को वहुत हानि पहुचती है तथा उसमे दुर्गन्ध आने लगती है। इस रोग के कीटाणुओ का काठे गेहू पर बहुत कम असर होता है।

५ .. **हाळीबीज** —अक्षय-तृतीया के पहले दिन को राजस्थान मे हाळीवीज कहते है। बच्चे छोटे-छोटे हल लेकर प्रात.काल खेतो मे जाते है और बड़े चाव मे हल चलाने का उपक्रम करते है और सूखी जमीन मे बीज डालते है।

५ .. **आखातीज** — इसे हिन्दी में अक्षय-तृतीया कहते है। यह पर्व हर साल वैसाख सुदि तीज को मनाया जाता है। यह तिथि कभी क्षय नही होती, इसीलिये इसे अक्षय कहा गया है। गाव मे इसका वड़ा भारी महत्व है। खीच और गळवाणी इस दिन का विशेष

भोजन है। शकुनो मे समझने तथा विश्वास करने वाले लोग भी इसी दिन, वर्ष भर की फसल आदि के सम्बन्ध मे शकुन लेते है। कहा जाता है कि प्रद्युम्न और रति का विवाह भी इसी दिन हुआ था। तब से यह दिन विवाह-सस्कार के लिए शुभ माना जाता है— 'आखातीज रा अणबूझिया सावा' राजस्थान मे आज भी मान्य है।

१८ .. **माटी रा म्है रंगरेजा हां** — राजस्थान मे युद्धो की अधिकता के कारण ऐसा माना गया है कि शासक-वर्ग ने अपने खून से इस धरती को रगा है। इसलिए कवि ने यहा उनके मुह से ये दर्प-भरे शब्द कहलवा कर धरती के लिए किया जाने वाला त्याग व्यजित किया है।

२३ .. **नीवां रै नीचै दबियोडी जुग-जुग री माटी** — प्राचीन समय मे जब बड़े किलो की नींव का दस्तूर होता था तो कभी-कभी मुहूर्त सुधारने के लिए नीव मे आदमी की बलि दी जाती थी। कवि का यहा यह आशय है कि आज इन्कलाब की आधी से बलि दिये गये उन मनुष्यो की मिट्टी किले की दीवारो को जड से उखाड़ कर आधी के साथ मिल गई है।

२६ .. **जे घड़ी विधाता रूपाळी** — धर्म-शास्त्रो मे ऐसा माना गया है कि विधात्री स्वय मिट्टी से मानव की देह को सवारती है। रूप और कुरूप उसी की देन है।

२९ .. **रखड़ी** — माग के बीचोबीच ललाट के ऊपरी भाग पर रहने वाला स्त्रियो का आभूषण जिसमें तरह-तरह के मोती तथा नग जडे रहते है।

२९ .. **बाजूबंद** — स्त्रियो के बाजू पर बाधा जाने वाला सोने या चादी का आभूषण जिससे रेशम की लबी डोर नीचे लटकती रहती है। डोरी के सिरे पर लाले या मोती पिरोये हुए होते है।

उसे बाजूवद की लूंब कहते है।

२६ ·· **तीमणियौ** — स्त्रियो के गले पर सज्जित तथा हृदय पर रहने वाला सोने का भारी गहना।

२६ ·· **खाती ही रोटी मांटी री पण गीत वीरै रा गाती ही** — राजस्थान मे यह कहावत वहुत प्रसिद्ध है। स्त्रियो का यह स्वभाव होता है कि ससुराल मे चाहे जितना सुख और आनन्द उपलव्ध होता हो, अपने पीहर की वडाई करती ही रहेगी। इस कहावत का यह रूप भी है—धान धणी रौ खावै, वडाई वीरै री करै।

२६ ·· **नागोरी गहणौ** — नागोर मे पुराने जमाने से लोहे का काम अच्छा होता है। हथकड़ी और वेडिया भी वही की प्रसिद्ध है। अत: व्यग मे अमूमन उसे नागोरी गहना भी कहा जाता है।

४३ ·· **गळियौ रंग कसूंवौ गैरौ** — प्राचीन समय मे युद्ध के अवसर पर अफीम गाल कर योद्धाओ को दिया जाता था। अफीम गालने की इस क्रिया को ही कसूवा गाळना भी कहते है। कवि ने यहा इन शब्दों का प्रयोग करके संघर्ष के लिए उद्यत वीरो मे एक विशेष जोश की भावना सचरित करने का प्रयत्न किया है।

४३ ·· **गोफण** — दो लवी रस्सियो के वीच गुथी हुई पट्टी वाला एक हथियार जिसमे पत्थर डाल कर वहुत दूर तक फेंका जा सकता है। राजस्थान में पक्षियो से खेती की रखवाली करने के निमित्त किसान प्राय इसका प्रयोग करते हैं।

४३ ·· **मूळ** — खेत मे कई पेड-पौधो के काटे जाने के बाद उनकी जड़े जमीन मे रह जाती है, उन्हे मूळ कहते है। उन्हे जमीन से निकाले विना हल नही चलाया जा सकता।

४३ ·· **हाथां पांणी लियौ** — हाथ पानी लेना राजस्थानी का प्रसिद्ध मुहावरा है। किसी काम को न करने के लिए प्रण करते वक्त ये

शब्द काम मे लिए जाते है। कभी-कभी हाथ मे पानी लेकर प्रण की साक्षी भी दी जाती है।

४३ ·· **उछाळौ** —— इस शब्द का राजस्थानी मे विशेष अर्थ है। पुराने जमाने मे जनता किसी कारण से तग आकर या रुष्ट होकर जब ठाकुर का गाव छोड देती थी तो उसे उछाळौ करना कहते थे। यहा कवि ने आधुनिक युग की भावनाओ के अनुकूल जनता का असतुष्ट होकर शासक वर्ग के खिलाफ विद्रोह करने को भी उछाळा ही कहा है।

५० ·· **आठौ काळ** —— राजस्थान मे सदियो से अकाल पडते रहे है। जब कोई भयकर अकाल होता है तो उस सवत् के पीछे ही उसका नाम इतिहास मे प्रचलित हो जाता है — जैसे छपनौ, पच्चीसौ, बहोतरौ। इसी प्रकार सवत् २००८ मे राजस्थान मे जो अकाल की विभीषिका फैली उसे कवि ने आठौ काळ कहा है।

५० ·· **सुगनचिड़ी** —— सफेद तथा काली झांई वाली एक छोटी चिडिया जिसे राजस्थानी मे रूपारेल भी कहते है। शकुन लेने वाले इस चिड़ी को बडा महत्व देते है, इसी कारण इसे सुगनचिडी कहा जाता है।

५१ ·· **ममोल्या** —— वर्षा के प्रारभिक दिनो मे लाल-लाल मखमली रग का कोमल कीडा धोरो पर रेगता है जिसे इन्द्रवधू, वीरवहूटी या सावन की डोकरी भी कहा जाता है।

५३ ·· **तूटै नभ में तारौ** —— तारा टूटना एक बहुत बडे अपशकुन का प्रतीक है। ऐसी मान्यता चली आई है कि जब तारा टूटता है तो देश का कोई बडा आदमी मरता है या कोई वडी आपत्ति आती है।

६१ · **बिरखा बींनणी** —— राजस्थान मे वर्षा का बहुत बडा महत्व है। बडी इतजार के बाद आने वाली इस वर्षा के साथ यहा के लोगो का अद्भुत रागात्मक सम्बन्ध है। इसीलिए सुन्दर दुलहिन के साथ उसकी उपमा दी गई है।

६१ ** **बींद पगलिया भरती** — अत्यत धीमी चाल से , नजाकत के साथ चलने को बीद पगलिया भरना कहते है क्योकि दूल्हा जब दुलहिन के साथ भावरे लेता है तो वह इसी चाल से चलता है ।

६१ ** **तीतर बरणी** — तीतर की पाखो के समान जो मटमैली बदली होती है उसे तीतर पखी वादली कहते है । इस वदली के आते ही वर्षा के आगमन की पूरी आशा बध जाती है । इस सम्बन्ध मे एक दोहा अत्यत प्रसिद्ध है —

तीतर पंखी वादळी, विधवा काजळ रेख,
आ बरसै वा घर करै, इणमे मीण न मेख ।

६१ ** **रूपाळी गिणगोर** — राजस्थान मे गणगोर का त्यौहार महत्वपूर्ण है । आभूषणो से लदी हुई गणगोर की सुन्दर मूर्ति की सवारी इस अवसर पर निकाली जाती है । अत्यत सुन्दर स्त्री की उपमा भी गणगोर से दी जाती है , इसीलिये कवि ने यहा वर्षा के राशि-राशि सौन्दर्य को व्यजित करने के लिए वर्षा को रूपाळी गिणगोर कहा है ।

६५ ** **किरत्यां** — किर्तिका नक्षत्र को राजस्थानी में किरत्या कहते है । इसमे कुल मिला कर बहुत नजदीक छ तारे होते है ।

६५ ** **हिरण्यां** — हिन्दी मे इसे म्रगशिरा नक्षत्र कहते है । यह हरिन के आकार का बहुत महीन तारो का एक झुण्ड होता है ।

७३ ** **भूंण** — कुए से पानी निकालने के लिए लाव के सहारे घूमने वाला गोलाकार लकडी का वडा-सा यत्र ।

७३ ** **गिडगिड़ी** — सूडिये वेरो मे लाव के साथ-साथ एक पतली रस्सी चडस के अगले भाग से वधी हुई ऊपर-नीचे आती जाती रहती है, लाव भूण पर टिकी रहती है, उसी प्रकार भूण के काफी नीचे वैसी ही पतली गोलाकार लकडी पर जहा रस्सी टिकी रहती

है उसे गिडगिड़ी कहते हैं।

७३ · कूड़िया — लकडी के लम्बे भारी दो लट्ठ जिनके बीच में लोहे के डडे से भूण फिरता रहता है।

७३ ·· चड़स — चमड़े का वड़ा थैला जिममे पानी भर कर वेरे से निकाला जाता है।

७३ ·· लाव — चमड़े से वुनी हुई मोटी रस्सी जिसके सहारे चटम भर कर वाहर खीचा जाता है।

७३ ·· खांमेड़ा — कुए पर वैलो को हाकने वाला व्यक्ति जो चडम वाहर आने पर लाव की कीली खोलता है। उसे कीलिया भी कहते हैं।

७३ ·· वारौ भरियौ बोलै रे — जव भरा हुआ चडस वाहर आ जाता है तो चड़स को खाली करने वाला इन 'वोलो' में आवाज देकर कीलिये को कीली खोल देने का सकेत करता है।

७३ ·· पीच — जहां गाये तथा अन्य जानवर वेरे पर पानी पीते है उसे पीच कहते है। पीच शव्द के साथ गायो और जानवरो की होने वाली भीड़ का अद्भुत दृश्य सामने आ जाता है। राजस्थान मे वेरे को पीचका भी कहते है।

७४ ·· छांटा लेवै — छुआछूत का अधिक ध्यान रखने वाले लोग अछूत का स्पर्श होने पर शुद्ध पानी का छींटा लेकर अपने को पवित्र करते हैं।

७८ जीणौ जग में गाजां-वाजां—आपत्तियों की परवाह न करते हुए अत्यत आनन्द और हर्ष के साथ जीवन व्यतीत करना।

७८ ·· थडी करै — घुटनो के बल रेगने वाला बच्चा जब पहले पहल पैरो पर खडा होने का प्रयत्न करता है तो उसे थड़ी करना कहते है।

७८ ·· **ऊग्यो सूरज लाल** — नये प्रभात मे नये युग का प्रकाशपुज, नवीन मान्यताओ और मूल्यो का प्रकाश फैला रहा है।

८२ ·· **हळोतियौ** — हळ जोतने लायक जो प्रारभ मे वर्षा होती है उसे हळोतिया कहते है। हळोतियो शव्द के साथ यहा के लोगों का विशेप रागात्मक सम्वन्ध है, क्योकि इस दिन का वोया हुआ अनाज वारह महीने खाते है।

८३ ·· **गुडळा वादळ** — पानी से लबालब भरे हुए काले भूरे बादल जिनसे तत्काल वर्षा होती है।

८३ ·· **भातौ** — वह खाना जो घर से खेत मे काम करने वाले किसानो के लिए पहुचाया जाता है।

८२ ·· **भतवार** — घर से भाता ले जाने वाली औरत को भतवार कहते है। वडी सी छवडी मे खाने-पीने का सामान जमा कर वह उसे अपने सिर पर रख लेती है, फिर खेतो की ओर जाती है। देरी होने पर खेत वाले वड़ी उत्सुकता से उसकी राह देखते है।

८७ ·· **निदांण** — जव फसल कुछ वडी हो जाती है तो कस्सी या खुरपी से फसल के आसपास उगने वाली व्यर्थ की घास को काट दिया जाता है — इसी क्रिया को निदाण करना कहते है। हिन्दी में इसके लिए निराई शव्द है।

८७ ·· **भरेत** — खेत का वह स्थल जहा खेत की अन्य जमीन से कुछ गहराई होती है जिससे चारो ओर का पानी वहा पर शामिल हो जाता है।

८८ ·· **भरी गवाड़ी** — गवाडी का तात्पर्य है भरापूरा कुटुम्व। इससे समृद्ध कुटुम्व की व्यजना निकलती है।

८८ ·· **वोलै ज्यांरा विकै बूमड़ा** — जो आवाज देकर ग्राहको को अपनी ओर आकर्पित कर सकते है उनका तो हलका अनाज भी

बिक जाता है अन्यथा अच्छे अनाज वाले भी बैठे रहते हैं । राजस्थानी मे पूरी कहावत इस प्रकार है —

बोलै ज्यांरा बूमड़ा बिकै ,
नहीं तो नजवा ही पड़िया रैवै ।

९१ .. **सूंडियौ** — राजस्थान मे कई प्रकार के कुए हैं। उनमें सूडिया भी एक है । इस कुए की सिंचाई के लिए चडस, हाथी की सूड के आकार का होता है। इस कुए को सींचने के लिए केवल बैलो को हांकने वाला एक ही आदमी चाहिए। चडस जब कुए के बाहर आता है तो स्वत: ही पास की कूंडी मे खाली हो जाता है।

९१ .. **पांणतियौ** — कुए पर फसल की क्यारियो मे पानी घेरने वाला व्यक्ति ।

९१ .. **कोरवांण** — फसल बोने के बाद पहली बार उसे जो बेरे का पानी दिया जाता है इसी को कोरवाण पिलाना कहते हैं ।

९१ .. **पैलौ जोटौ** — पहले पहल खेत की सिचाई के लिए धोरे में बहते हुए पानी की गति को पैलो जोटौ कहते हैं ।

९१ .. **खोडौ घेरजै** — खोडे का मतलब होता है क्यारी । घेरने से तात्पर्य है एक क्यारी से दूसरी क्यारी मे पानी डालना ।

९२ .. **डांफर** — सर्दी के दिनो मे उत्तर से चलने वाली ठडी हवा।

९२ .. **पाळौ** — सर्दी के दिनो मे अधिक ठड के कारण ओस गिरती है जिससे फसल को नुक्सान पहुचता है, इसे पाला गिरना कहते हैं।

९२ .. **घीयौ** — कुए का पानी मिट्टी की कच्ची नालियों मे होकर जब क्यारियों मे जाता है तो जमीन पानी न सोखे इसके लिए चिकनी मिट्टी मे उसमे जो लेप किया जाता है उसे घीयौ देना कहते हैं ।

९७ **पांणत** — क्यारियो मे पानी देने की क्रिया ।

' आनरा

९७ ·· **माळ** — घड़लियो की माला जो अरहट के घूमने के साथ-साथ घूमती है।

९७ ·· **पनड़ी** — अरट के साथ लगी हुई एक लबी लकडी जो निरंतर अरट के घूमने के साथ-साथ बजती रहती है जिससे पांणत करने वाला सतर्क रहता है कि पानी आ रहा है।

९७ ·· **काळियौ डोरौ** — अरट के ऊपर दो चरखिये लगी रहती हैं और उन पर काला डोरा लिपटा रहता है जो अरट के घूमने के साथ-साथ एक चरखी से दूसरी चरखी पर सिमटता जाता है। एक चरखी का डोरा जब पूरा दूसरी चरखी पर आ जाता है तो एक डोरा समाप्त गिना जाता है। इससे काम और पानी का हिसाब रखने मे सहूलियत रहती है।

९८ ·· **आड़ंग** — वर्षा के कुछ देर पहले जो गर्मी होती उसे आड़ग कहते है।

९८ ·· **मावटौ** — सर्दी की मौसम मे होने वाली बरसात को मावटा कहा जाता है।

१०२ ·· **बीघोड़ी** — प्रति बीघे के हिसाब से लिया जाने वाला कर। बीघोडी पैमाइश होने के पश्चात लगने लगी है, इसके पहले जागीरी व्यवस्था मे जागीरदारो को हासल या मुकाता दिया जाता था।

१०२ ·· **सूड़** — हल बोने के पहले खेत मे जो बड़ी-बडी झाड़िया होती है उन्हे काटने की क्रिया को सूड करना कहते है।

१०२ ·· **आईठांण** — निरन्तर काम करने से हथेली मे जगह-जगह पडे हुए छालों के सूखने से जो गाठे बन जाती है उन्हे आईठांण कहते है।

१०३ ·· **तीज रौ तिंवार** — भादवे की कृष्ण पक्ष की तीज को यह त्यौहार मनाया जाता है। नव-वधुओ के पीहर से सातू [एक प्रकार

की मिठाई] लेकर उसके निकट सम्बन्धी आते है। पूरे भारतवर्ष मे यह त्यौहार मनाया जाता है पर राजस्थान मे इसका विशेष महत्व है।

१०६ " बायरियौ — इसका शाब्दिक अर्थ पवन होता है। राजस्थानी मे इसे सम्बोधित कर कई लोक-गीत गाये जाते है, जिससे इसके साथ विशेष रागात्मक सबध स्थापित हो गया है। कवि ने भी नये ढग से बायरियै को सम्बोधित करवा कर विरहिणी के भावो को व्यक्त किया है।

१०६ " सूरियौ पवन — वर्षा की मौसम मे उत्तर तथा पश्चिम के बीच की ओर से आने वाला पवन।

१०७ " पुरवाई — पूर्व की ओर से आने वाली वायु। भादवे मे जब यह वायु चलती है तो शीघ्र ही वर्षा होने की आशा बन जाती है।

१०७ " ओळूंडी — इसके लिए हिन्दी मे 'याद' शब्द है पर 'ओळूडी' मे विरहाकुल हृदय की कसक व्यक्त करने की जो अनूठी क्षमता है वह 'याद' मे नही।

१०९ " पग मडणा — यह एक बहुत पुरानी परिपाटी है। किसी राजा महात्मा या तीर्थयात्रा से लौट कर आने वाले व्यक्ति के हार्दिक सम्मानार्थ पथ मे लबा कपडा बिछा देते है। लाल रग से रगे हुए उनके चरण-चिन्हो को पूजनीय समझा जाता है। कवि ने यहा शुभ दिशा की ओर गतिशील आधुनिक इतिहास के प्रगतिशील चरण-चिन्हो को 'पग मडणा' से तुलना की है।

शब्दार्थ

[चेत मांनखा मे प्रयुक्त राजस्थानी शब्दों का हिन्दी में अर्थ]

अ

अंतर	– इत्र
अदाता	– अन्न देने वाला
अकारथ	– व्यर्थ
अडोळा	– बिल्कुल
अणगिण	– अनगिन
अणचेना	– सत्ता मे बावले लोगों को
अथाग	– अथाह
अभागी	– दुर्भाग्यशाली
अमोलक	– अमूल्य
अरट	– रहट
आगणाँ	– आगन में
आचळ	– आचल
आण	– सौगन्ध
आडी	– सामने
आवेटै	– बीच मे
आभी	– आकाश
आयौ	– आया
आग	– आगा
अँडा	– ऐसे

इ

इण	– इस
इतियास	– इतिहास
इत्ती सी	– इतनी सी

उ , ऊ

उखरडी	– घूरा
उगावैला	– उगायेगी
उच्छव	– उत्सव
उड गया	– उड गये
उडतोडा	– उडते हुए
उडीकै	– इन्तजार करती है
उरवाणा	– नगे
उलट्टण	– उल्टने को

ऊनै	— गरम
ऊनाळू	— गर्मी की

क

ककाळ	— मृत देह
कवळ	— कमल
कवळा	— कोमल
कढौ	— निकलो
कण	— एक दाना
कदै	— कभी
कमतरिया	— काम करने वाले
करडी	— पक्की
करसा	— किसानो
करैला	— करेंगे
कळस	— पीतल या तावे का घडा
कसी	— निराई करने का एक औजार
कसूवौ	— अफीम
काभळ	— झुण्ड
कानी	— तरफ
कामणी	— कामिनी
काचा	— कच्चा
काजळिया	— कज्जल
काडा	— निकालते है
काढिया	— निकाले
काढची	— निकाला
कामेतण	— मजदूरिन
काळ	— अकाल
काळजा	— कलेजे की
काळजौ	— कलेजा
कितरा	— कितने
किरड	— काट कर
किरसाण	— किसान
कीकर	— कैसे
कूपळ	— कोपल
कोट कागरा	— गढ के कगुरे
कोठै दोळौ	— पानी के हौज के चारो ओर
कौल	— वायदा

ख

खडणनै	— वोने को
खडाया	— वोवाये
खापण	— कफन
खात	— खाद
खाती	— तेज
खावती	— खाती हुई
खीरा	— अगारो सा
खीली	— कीली
खुणै	— कोने मे
खेजडी	— एक तरह का वृ

ग

गळवाणी — गुड की खडी
गळहार — गले का हार
गाडरा - भेडे
गिगन — गगन
गिणिया — गिनती के
गिदरा — गद्दा
गुडाळया — घुटनो के बलपर
गुमेज — गर्व
गैरौ — गहरा
गोखडै — झरोखे मे
गोरी — गाय चराने वाला

घ

घममाण — युद्ध
घूमर — राजस्थानी नृत्य विशेष
घोचे — लकडी का टुकडा

च

चवरी री चूदडी — चवरी मे बैठते समय ओढी जाने वाली चुनरी
चऊ — हल का एक उपक्रम
चादडल्यौ — चाद
चानणौ — प्रकाश
चापौ — गायो का झुण्ड
चामडी — चमडी
चिदी — लीरी
चिळकं — प्रकाश
चीसा — चीखे
चुकाणौ — चुकाना
चुकावण — चुकाने को
चूक — भूल
चूसै — सोखता है

छ

छळती — छळती हुई
छाजै — सुशोभित होता है
छीज्यौ — छीजा
छेडलौ — अतिम
छेडं — किनारे
छेती — दूरी
छौळा — लहरे

ज

जद — जब
जमानौ — जमाना

जमाणी — जमाना
ज्या — जिनको
जामण — जननी
जाखोडौ — ऊट
जाजम — बिछायत
जीवण — जीवन
ज्यू — तरह
जैर — जहर
जोग — योग
जोत — ज्योति
जोय — खोज

झ

झपट्टण — झपटने को
झिलमाझिल — बराबर
झेलै — सहन करती है
झेल्या — झेले
झोला — झोके
झोलौ — झोका

ट

टळै — टलै
टाबर — बच्चे
टोळी — टोली

ड

डिगणी — डिगना

त

तरवारा — तलवारे
ताळ — नाल
तावडै — धूप की
तूटै — टूटती है
तेवडली — विचारली है
त्रवाळ — नगाडा

थ

थेपडै — थपकिया देती है

द

दारू — शराब
दिलासो — आश्वासन
दीखै — दिखाई देता है
दुलारौ — प्यारा
दोफारा — दोपहर को
दोरौ — मुश्किल से

ध

धजा — झडा
ध्रमकै — नगाडा बजता है
धारणहार — धारण करने वाला
धुर — उत्तर
धोळी — सफेद

न

नणदी — ननद

नथड़ी — नाक मे पहनने का गहना जिसमे मोती पिरोया हुआ होता है।

नवलखौ — कीमती

नवँ — नये

नवौ — नया

नाई — हल का एक साज

निपजाया — उत्पन्न किये

निभाणौ — निभाना

निवायौ — गर्म

नेनौं — लडका

नेम — सिद्धान्त

नैरा — नहरे

प

पच्छै — फिर

पगल्या — पैर

पड्ग्यौ — पड गया

पडसी — पड़गा

पड्या — पड़े है

पण — परन्तु

पत — इज्जत

पतियारौ — विश्वास

पतीजै — पतियाता है

पत्तां — पत्तो की

पलट्टण — पलटने को

पलटियौ — पलटा

पसवाड़ौ — रुख

पागळी — पगु

पाण — बल पर

पाक्या — पके

पाकै — पकती है

पालणै — झूले मे

पाळी — पाली

पासौ — पासा

पिचरगे मोळियै — पाच रगो का साफा

पिछौळा — एक तालाव विशेप

पिणघट — पनघट

पिरथीपाळ — पृथ्वीपाल

पीच — पानी पिलाने की जगह

पूख — धान की बाली

पैली — पहले

पोरौ — पहरा

फ

फरज — फर्ज

फरूकै — उडती है

फूलाणी — पुष्पित हुई

ब

वदा — वदे

वगनौ — हुक्का-चक्का

बचावण — बचाने

बतूळौ — आँधी का बवंडर

बदळिया — बदले

बरसाळौ — वर्षा ऋतु

बळबळतै — जलते हुए

बळदा नै — बैलों को

बागौ — आधा पागल

बादळ — बादल

बायरियौ — पवन

बायरै — पवन के

बावळा — बावला

बिलख — बिलबिलाता है

बीज्या — बोने पर

बीजणी — हल का एक साज

बीनणी — दुलहिन

बूठा — बरसा

बू-बेट्या — बहू-बेटिया

बेडलौ — दो घडे

बेला — बेले

बेवडी — झुकी हुई

बैरण — बैरिन

बोबौ — स्तन

बोळौ — बहरा

भ

भरळ — चक्कर

भमैं — चक्कर काटते हैं

भाण — भानु, सूर्य

भाग — भाग्य

भिनक — चमक

भूडौ — बुरा

भेख — भेष

भेळौ — शामिल

भैंस्या — भैंसे

भोपाळ — राजा

म

मगळ — मांगलिक

मडता — अंकित

मटका — हावभाव

मतवाळौ — मतवाला

मरगी — मर गई

मरैला — मरेंगे

माग्या — मांगने से

माछळी — मछली

माटी — मिट्टी

मारू — रईस

मावड — मां

मावै — समाती है

मिनखापण — मनुष्यत्व

मुगट — मुकट

मुगती — मुक्ति
मुड्दा — मुर्दे
मुदरौ — मधुर
मुळकता — मुस्कराते हुए
मूघी — महगी
मूघा — महगा
मून — मौन
मेणत — मेहनत
मेह — वर्षा
मैंफिल — महफिल
मैल-माळिया — बडे तथा छोटे महल
मोसा — व्यंगपूर्ण उलहना

र

रगमैल — विलासिता के महल
रज — रज
रखवाळा — रखवाले
रणखेत — रणक्षेत्र
रया — शैयन
रह्यौ — रहा
राली — गुदडी
रावडियौ — मिट्टी के महीन कणो का घोल
री — की
रुजगार — रोजी
रूख — वृक्ष
रूखडा — वृक्ष
रूपल — रजत
रूपाळी — रूपमयी
रोय — रोती है

ल

लडाभूम — सजी हुई
लडियौ — लडा
लाणत — लानत
लागज्या — लग जाता है
लाटौ लट्यौ — जमीन का लगान ले गया
लिछमी — लक्ष्मी
लीली — हरी
लूमभूम — मस्ती से
लूरा — नृत्य विशेष
लेखौ — गिनती
लेवतौ — लेता था
लै — लेकर
लैर — लहर
लैर लैर — लहर लहर
लोई — लहू

व

वाल्ही — प्रिय

वैराग — वैराग्य
वोरौ — वोहरा

स

सघट्टण — सगठन
सभळाया — सभलाये
सरवौ — सचेत
सगती — शक्ति
सजीवण — सजीवन
सज्जौ — तैयार हो जाओ
सपना — स्वप्नो के
सरै — निकलता है
सीचा — सीचते है
साभळौ — सुनो
साटै — वदले मे
साटौ — एक तरह की घास
सारू — लिए
सिनावडौ — एक तरह की घास
सिमरथ — समर्थ
सिल — शिला
सीचारा — सीचने वाला
सीचै — सीचता है
सीझ्यौ — सीझा
सुणाऊ — सुनाऊ
सुरापण — वीरत्व
सुहाणौ — सुहावना
सूप्यौ — सौंपा हुआ
सूपै — सौंपती है
सैचन्नण — पूर्ण प्रकाश
सैनाणी — निशानी
सोगरा — वाजरी की रोटी
सौगन — सौगन्ध

ह

हदा — का
हमे — अव
हळ — हल
हळकी — हलकी
हालरियौ — लोरी
हाली — चली
हालै — चलती है
हियै — हृदय मे
हिलावै — हिलाती है
हिलोळा — हिलोरे
हुयनै — होकर
हेज — स्नेह
हेती — सहित
हेमाळै — हिमालय
हेलौ — आवाज
होळा — गेहू की आधी पकी वाली